• वर्ष ६५ • अंक १५ • मूल्य १२०

अगस्त (प्रथम) २०२३

पाक्षिक

परोपकारी

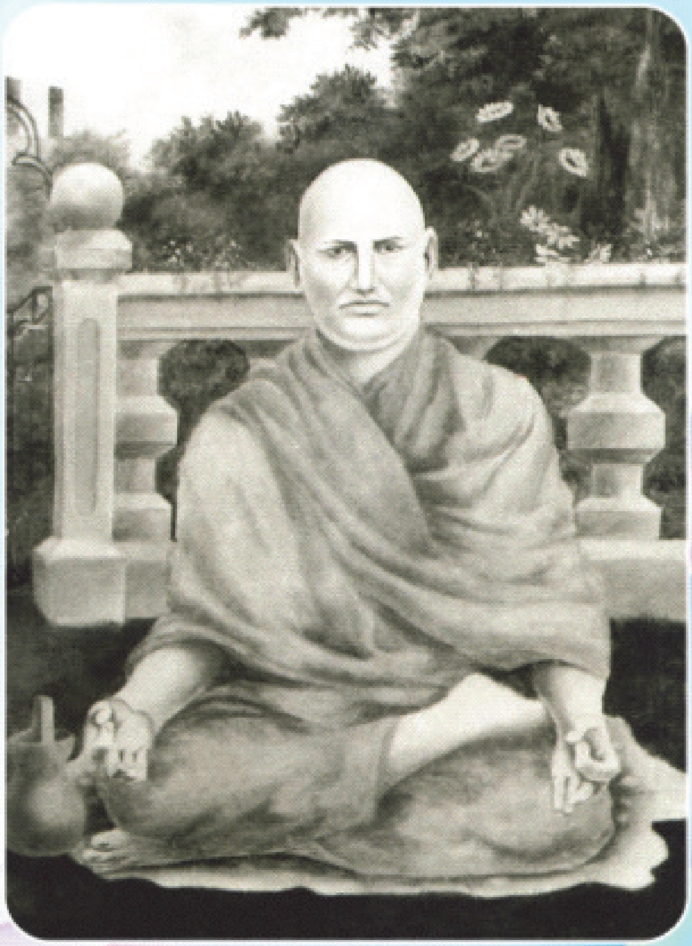

महर्षि दयानन्द सरस्वती

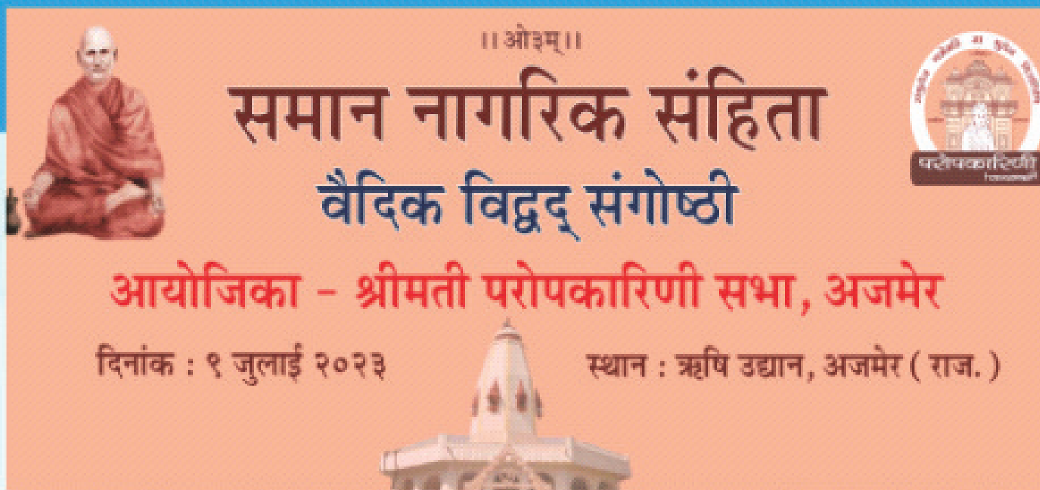

दायें से - संगोष्ठी का संचालन करते मुनि सत्यजित् (मन्त्री-परोपकारिणी सभा, अजमेर), संगोष्ठी की अध्यक्षता करते डॉ. सुरेन्द्र कुमार (संरक्षक-परोपकारिणी सभा, अजमेर) एवं न्यायमूर्ति श्री सज्जन सिंह कोठारी।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुखपत्र

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६५ **अंक** : १५

दयानन्दाब्दः १९९

विक्रम संवत् - श्रावण शुक्ल २०८०

कलि संवत् - ५१२४

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२४

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४
०८८९०३१६९६१

मुद्रक-देवमुनि-भूदेव उपाध्याय
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
७७४२२२९३२७

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अगस्त प्रथम, २०२३

अनुक्रम

०१. वर्चुअल-मतान्तरण	सम्पादकीय	०४
०२. श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी....	श्री भावेश मेरजा	०७
०३. आर्यसमाज के प्रेरक अनूठे विलुप्त...	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	११
* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम		१४
०४. परम-पद-२	साधु सोमतीर्थ	१५
०५. उपनिषद् वाङ्मय में "ईश्वर....	स्वामी मुक्तानन्द	१९
* दम्पती शिविर		२७
* १४० वाँ ऋषि बलिदान समारोह		२८
* वेदगोष्ठी-२०२३		३०
* वैदिक स्वर संधान कार्यशाला		३२
* समान नागरिक संहिता-विद्वत् संगोष्ठी		३३

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

वर्चुअल-मतान्तरण

मनुष्य मात्र की स्वाभाविक अभिलाषा रहती है कि उसे सुख की प्राप्ति हो। अर्थात् वह अपनी अनुकूलता चाहता है। एक अनुकूलता है कि उसे क्षणिक या कुछ काल के लिए सुख प्रदान करे। दूसरी है भले ही इसमें कुछ समय तक तो सहजता न हो, किन्तु क्षणिक सुख की अपेक्षा दीर्घकालिक सुख की प्राप्ति सम्भव है। जैसे-जैसे मनुष्य का विवेक जागृत होता है, तो वह क्षणिक सुख की अपेक्षा दीर्घकालिक सुख प्राप्त करने में प्रयत्नशील होने लगता है।

मनीषियों ने स्वानुभूत चिन्तन के आधार पर उस जीवन-शैली का प्रतिपादन किया, जिसमें क्षणिक की अपेक्षा दीर्घकालिक और ऐन्द्रियिक की अपेक्षा आत्मिक सुख या आनन्द को महत्त्व या अधिमान प्राप्त है। **इसे धर्म के नाम से सम्बोधित किया गया है।** इसका एक पक्ष है- **उपासना/भक्ति**, जिसे आजकल पूजापाठ के नाम से जाना जा रहा है। इसका अर्थ केवल निवेदन करना और उसके बदले में भौतिक सुख संसाधनों को प्राप्त कर लेना भर नहीं है। इसका वास्तविक अभिप्राय उस परमसत्ता (ईश्वर-भगवान् आदि) के गुणों का चिन्तन करते हुए, उन्हें आत्मसात् कर लेना है। धार्मिक जगत् के बाह्य कर्मकाण्ड (सभी मत-पन्थों में धर्म/ईश्वर भक्ति के नाम पर किए जाने वाले क्रिया-कलाप) में अधिकांश रूप में इसका विकृत स्वरूप देखा जा सकता है। दूसरा पक्ष है- **आचार/जीवन शैली**। इसमें क्षमा, अहिंसा, अस्तेय, व्यक्तिगत जीवन की पवित्रता तथा करुणा आदि से संवलित जीवन-व्यवहार मुख्य है।

वेद के सर्गारम्भ में ईश्वर द्वारा उपदिष्ट होने के कारण वहाँ इसका (धर्म=उपासना/भक्ति एवं आचार/जीवनशैली) शुद्धतम स्वरूप उपलब्ध है। किन्तु समय-समय पर उत्पन्न होने वाले अनेक महापुरुषों ने देश-काल की परिस्थितियों तथा स्वमति के अनुसार उपासना एवं जीवन शैली को अपने ढंग से व्याख्यात किया। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक महापुरुष और उसके अनुयायी यह मानने लगे कि- उनकी पद्धति और विचार ही सर्वोपरि हैं। इसका अगला कदम या पड़ाव यह हुआ कि केवल और केवल वही व्यवस्था जो उन्हें स्वीकारर्य है, वही सबके लिए बाध्यकारी हो। यदि कोई इसे स्वीकार नहीं करता है, तो वह शत्रु है। शत्रु के साथ जो व्यवहार होना चाहिए, वह भी उसी का पात्र है।

वैदिक जिसे आजकल हिन्दू (यद्यपि आजकल हिन्दू के नाम पर प्रचलित अथवा प्रसिद्ध किसी व्यवस्था/व्यवहार को पूर्णतः वैदिक नहीं कहा जा सकता है।) कहा जाता है। इसी प्रकार की अन्य व्यवस्थाएँ ईसाई और इस्लाम हैं। यद्यपि इनके अतिरिक्त यहूदी एवं पारसी भी हैं, किन्तु पारसी अपनी विचारधारा या व्यवस्था के प्रसार के लिए प्रयत्नशील दिखाई नहीं देते हैं। यहूदी ईसाई के साथ इस प्रकार सम्मिलित हैं कि वह भी अपनी विचार व्यवस्था के प्रसार के लिए पृथक्शः यत्नशील नहीं कहे जा सकते हैं।

मुख्य प्रश्न हिन्दू-ईसाई और इस्लाम से सम्बन्धित है। समाज में कोई कटुता अथवा विद्वेष कहीं दिखाई देता है, तो वह प्रायः इन्हीं के मध्य दिखाई देता है।

भारत में इस्लाम का उदय इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटना है, किन्तु विश्वभर में उसका प्रसार एक ही प्रकार से हुआ। उसका महत्त्वपूर्ण उद्देश्य भी संसार में इस्लामी शासन की स्थापना है। भारत में इस्लाम के आगमन के साथ ही बलात् धर्मान्तरण/मतान्तरण प्रारम्भ हुआ। ईस्ट इण्डिया कम्पनी का राज्य स्थापित होने और उस राज्य के ब्रिटेन की महारानी के नियन्त्रण में चले जाने के पश्चात् ईसाई मत का प्रचार अर्थात् धर्मान्तरण/मतान्तरण

के प्रयास तेज हो गए। इसके लिए राजसत्ता के सहयोग, नौकरी का आकर्षण आदि के साथ धन का प्रलोभन भी महत्त्वपूर्ण था। चिकित्सा और शिक्षा भी इस मतान्तरण के महत्त्वपूर्ण साधन रहे हैं। वैचारिक आधार पर किए मतान्तरण और किसी भय, लोभ आदि के माध्यम से बलात् कराए गए मतान्तरण को समकक्ष नहीं माना जा सकता।

इस्लाम और ईसाइयत का यह मतान्तरण मनुष्य के अभ्युदय-कल्याण के लिए न होकर स्वसम्प्रदाय की वृद्धि कर राजशासन की स्थापना एवं सुरक्षा के लिए किया गया था।

आर्यसमाज की स्थापना और उसके प्रसार के साथ इन दोनों मतों द्वारा किए जा रहे मतान्तरण का कार्य न केवल रुका, अपितु मतान्तरित पुनः अपने मूल की ओर लौटने भी लगे। इन मतों के आक्रामक प्रचार का उत्तर उसी शैली में दिया जाने लगा। यदि इन मतों की ओर से कोई ट्रैक्ट या पुस्तक प्रकाशित-प्रसारित की गई, तो आर्यविद्वानों द्वारा उसी शैली में उसका उत्तर देकर प्रसारित भी किया गया। व्याख्यानों के माध्यम से वैदिक/हिन्दू धर्म पर किए जाने वाले आक्षेपों के उत्तर इतनी गम्भीरता और प्रामाणिकता से दिए जा रहे थे कि उनकी बोलती बन्द होने लगी। प्रतिक्रिया स्वरूप अर्यसमाज के विद्वानों/लेखकों को निशाना बनाया गया। पण्डित लेखराम आर्य मुसाफिर, महाशय राजपाल, स्वामी श्रद्धानन्द आदि को इस्लाम के अनुयायियों द्वारा शहीद किया गया। निजाम हैदराबाद द्वारा हिन्दुओं को अपमानित (वसवेश्वर मन्दिर की गुम्बद का निर्माण केवल इसलिए रुकवा दिया गया था कि उसकी परछाई मस्जिद पर पड़ेगी और इससे मस्जिद नापाक हो जाएगी) और पीड़ित करने का विरोध भी आर्यसमाज ने सत्याग्रह कर निजाम की जेलों को भर कर दिया। निजाम मीर उस्मान अली को आर्यसमाज की माँगे माननी पड़ीं। इसमें अनेक सत्याग्रही शहीद हुए। हिन्दू धर्म रक्षा के लिए आर्यसमाज ने सर्वोच्च बलिदान दिया।

धर्म के शुद्धस्वरूप के प्रचार तथा धर्म रक्षा के लिए दिए आर्यसमाज द्वारा दिए गए बलिदानों का हिन्दू समाज ने वह समादर नहीं किया, जो उसे करना चाहिए था। हिन्दू समाज उपासना के नाम पर अतार्किक प्रथाओं का दास बना रहा और धर्म के उच्च नैतिक पक्ष के प्रचार-प्रसार पर भी उसने ध्यान नहीं दिया। उपासना के नाम पर दिनानुदिन बढ़ते पाखण्ड और अन्धविश्वास तथा धर्म के स्वरूप से अपरिचय (इसमें देश में प्रचलित शिक्षा पद्धति जिसमें धार्मिक/नैतिक शिक्षा कोई स्थान नहीं है का योगदान भी कम नहीं है।) ने वर्तमान पीढ़ी को उस स्थान पर पहुँचा दिया है, जहाँ वह अपनी उपासना पद्धति की आलोचना का उत्तर देने में अक्षम होकर दूसरे द्वारा प्रशंसित उसी की उपासना पद्धति जो पूर्णतः अतार्किक तथा अन्धविश्वास से पूर्ण है को तार्किक मानने लगता है। पूजा-उपासना के लिए किए जाने वाले कृत्य भी अतार्किक और इस्लाम-ईसाईयत की प्रार्थनाएँ उसे वैज्ञानिक दिखाई देने लगती हैं। साथ ही हिन्दू देवी-देवताओं के चरित्र को लेकर किए जाने वाले आक्षेप विशेषतः सोशल मीडिया पर विपक्षियों द्वारा किए जाने वाले प्रश्न युवा मन को निरुत्तर करते हैं।

हिन्दू धर्माचार्यों की नीति प्रायः शुतुरमुर्गी है। कथाओं के आयोजन की भव्यता और श्रोताओं की उपस्थिति ही धर्म की प्रभावना मान ली जाती है। इन कथाओं में सुनाई जाने वाली अनेक अन्तः कथाएं केवल कालक्षेपण तो करती हैं, किन्तु उनका सन्देश शून्य से अधिक नहीं है। सांगठनिक स्तर पर नई पीढ़ी को धार्मिक शिक्षाएँ संक्रान्त करने के प्रयत्न लगभग शून्य के स्तर पर ही हैं। वैयक्तिक स्तर पर भी हिन्दू माता-पिता अपनी सन्तान को वैज्ञानिक शिक्षा से तो शिक्षित करने का भरपूर प्रयत्न करते हैं, किन्तु धार्मिक/नैतिक शिक्षा उन्हें उपयोगी प्रतीत नहीं होती। हाँ जब दुर्घटना घट जाती है, तब विलाप के अतिरिक्त कुछ भी नहीं।

सोशल मीडिया के माध्यम से विगत कुछ वर्षों से इस्लाम एवं ईसाई दोनों सक्रिय हैं। इनका प्रमुख ध्येय हिन्दू धर्म की न्यूनताओं को प्रकट कर उसके स्थान पर स्व-स्व धर्म की श्रेष्ठता का प्रतिपादन है। इसमें एक नया आयाम जुड़ा है खेल का। सोशल मीडिया पर इस प्रकार के एप अपलोड़ किए जा रहे हैं, जिनमें एपिक गेम्स की भूमिका भी बताई जा रही है।

धर्मान्तरण करते समय पूर्व में व्यक्ति का नाम भी बदल दिया जाता था। ईसाई पादरियों द्वारा अनेक वर्ष पूर्व नाम परिवर्तन के बिना पूर्व नाम (भले ही वह लीला, चरणदास, अमित आदि कुछ भी हो) से ही दीक्षित किया जाने लगा और ईसाई होने पर भी व्यक्ति लीला, चरणदास, अमित नामधारी बना रहा। अब इस्लाम के मोटीवेटर भी **नाम परिवर्तन के बिना पाँचों समय का नमाजी, रोजादार आदि बना रहे हैं।** पिछले दिनों गाजियाबाद, प्रयागराज, देहरादून आदि स्थानों पर इस प्रकार के वर्चुअल मतान्तरण हुए, जिनमें कोई धार्मिक विधि दिखावे के तौर पर नहीं की गई। यह मतान्तरण पूर्ण रूपेण वर्चुअल माध्यम से हुए हैं। प्रकाशित घटनाओं से स्पष्ट हो रहा है कि इस प्रकार के मतान्तरण का लम्बे समय तक पता ही नहीं लगता। मतान्तरित व्यक्ति शनैः शनैः नए मत में इतना रम जाता है कि उसे हिन्दू धर्म में कमियां ही कमियां दिखाई देने लगती हैं। इतिहास साक्षी है कि ऐसे मतान्तरित अधिक कट्टर/मतान्ध हो जाते हैं कि अवसर आने पर हिन्दुत्व के विध्वंसक तक बन जाते हैं। **हिन्दू समाज ने उड़ीसा के गजपति मुकुन्ददेव के सेनापति राजीवलोचन राय (मुस्लिम नाम काला पहाड़) द्वारा हिन्दू धर्म को पहुँचाई क्षति से कोई सीख नहीं ली।** नूतन घटनाएं उसी ओर संकेत कर रही हैं। जैसे-

१. देहरादून की घटना के सम्बन्ध में समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ है कि ब्राह्मण परिवार का यह युवक पिछले चार वर्ष से नमाज पढ़ता आ रहा है। **पिता द्वारा नमाज पढ़ने से रोके जाने पर वह पिता पर ही हमलावर हो गया।**

२. प्रयागराज में ब्राह्मण परिवार के सत्रह वर्षीय बेटे **ने जनेऊ तोड़कर फेंक दिया और मन्दिर जाना छोड़कर नमाज पढ़ने लगा।**

३. इसी प्रकार की घटना गाजियाबाद की भी है, जिसमें एक उद्यमी ने पुलिस से शिकायत की है कि उसका १२वीं पास बेटा **जिम के बहाने नमाज पढ़ने जा रहा था।** मोबाईल की जाँच से छात्र समेत चार के मतान्तरण का पता चला।

४. भोपाल में एक युवक के गले में कुत्ते की तरह पट्टा बाँधकर घसीटते हुए मतान्तरण के लिए दबाव बनाना कौनसा नैतिक कर्म है? अपने को सभ्य कहने वाला कौन ऐसा व्यक्ति है, जो इसे उचित कहेगा? मानवीय अस्मिता का इससे बड़ा तिरस्कार क्या होगा? क्या यह व्यवहार मानवता के नाम पर कलंक नहीं है?

इसी प्रकार ईसाई पादरियों द्वारा ग्राम-ग्राम जाकर मतान्तरण के प्रयास की सूचनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। इस्लाम में नाम परिवर्तन और खतना महत्त्वपूर्ण थे। चोटी-जनेऊ का परित्याग तो था ही, किन्तु आज चोटी-जनेऊ तो स्वयं ही छोड़ दिया और खतना को वर्चुअल माध्यम में इस्लाम ने पीछे कर दिया है।

हिन्दू के लिए कभी मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी ने कहा था कि- हिन्दू तो हमारे सैद-ए-करीब हैं=अर्थात् ये हमारे निकटस्थ शिकार हैं। उस समय तो पं. लेखराम आदि कि सक्रियता ने उसके मन्सूबों पर पानी फेर दिया था, किन्तु आज लगता है कि हिन्दू शिकार होने के लिए पूरी तरह तैयार है। **यदि इस प्रकार की घटनाएं भी संगठन के स्तर पर हलचल पैदा न कर सकीं, तो ये बड़े-बड़े धार्मिक कथाओं (भागवत आदि) आयोजन वृथा ही रहेंगे और कुछ दिनों में इतिहास के प्रसंग होंगे तथा व्यथा के अतिरिक्त कुछ भी तो नहीं मिलेगा।**

– डॉ. वेदपाल

श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी का 'व्याख्यान'-एक अदने आर्यसमाजी की दृष्टि में-२

– भावेश मेरजा

पिछले प्रथम अंक का शेष द्वितीय भाग....

महर्षि जी ने मूर्तिपूजा को वेद-विरुद्ध एक अत्यंत अनर्थकारी दुराचार माना है। उन्होंने अपने जीवन में मूर्तिपूजा के अंधकार को दूर करने के लिए प्रचंड पुरुषार्थ किया था। यदि ऐसा कहा जाए कि वे विश्व के सबसे बड़े मूर्तिपूजा-विरोधी व्यक्ति थे, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आर्यसमाज के विद्वानों ने भी मूर्तिपूजा के खंडन में अत्यंत पुरुषार्थ किया है। इसका कारण यह है कि आर्यसमाज निश्चित रूप से ऐसा मानता है कि जब तक संसार में मूर्तिपूजा का प्रचलन रहेगा तब तक ईश्वर के सत्य या वेदोक्त स्वरूप को जनमानस में स्थापित ही नहीं किया जा सकेगा और तब तक कृत्रिम या काल्पनिक भगवानों या देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना में संसार लिप्त रहेगा। यदि व्यक्ति का आस्तिक्य ज्ञान-आधारित या प्रमाण-आधारित नहीं है, तो ऐसे आस्तिक्य से शुभ परिणाम प्राप्त होने की संभावना क्या हो सकती है? इसलिए आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्दजी एवं आर्यसमाज के विद्वानों ने मूर्तिपूजा को अविद्या-अंधकार समझते हुए इसके खंडन में निरंतर पुरुषार्थ किया है-चाहे इसके लिए कोई उनकी स्तुति करे या निंदा, यह भिन्न बात है। महर्षि पतंजलि जी ने योगदर्शन में चेतन को जड़ और जड़ को चेतन समझने को अविद्या का एक लक्षण माना है। महर्षि दयानन्दजी ने आर्यसमाज के नियमों में एक कर्त्तव्य यह बताया है कि आर्यसमाज 'अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि' करता रहेगा। इसलिए आर्यसमाज मूर्तिपूजा का खंडन कर रहा है इसे उसके कर्त्तव्य-पालन का अभिन्न अंग समझना चाहिए, परंतु सच्चिदानन्दजी आर्यसमाज के विद्वानों से पूछते हैं कि- ''सामान्य बुद्धि से विचार करें कि मूर्तिपूजा का इतना प्रबल खंडन करने पर भी क्या मूर्तिपूजा से लोग अलग हुए?... आर्यसमाज के विद्वानों को सिंहावलोकन करना चाहिए। इतने सालों की जद्दोजहद के बाद, 'क्या पाया और क्या खोया'?''

सच्चिदानन्दजी इन प्रश्नों के द्वारा आर्यसमाज के विद्वानों को यह बताना चाहते हैं कि आर्यसमाज के द्वारा किया गया मूर्तिपूजा का खंडन आर्यसमाज के लाभ में नहीं है, इससे आर्यसमाज की छवि बिगड़ती है और लोग मूर्तिपूजा छोड़ते नहीं हैं।

सच्चिदानन्दजी स्वयं सुधारवादी हैं। वे अच्छी तरह से जानते ही होंगे कि धर्म एवं समाज संशोधन के कार्य कंटकाकीर्ण ही होते हैं। प्राय: उनके तत्काल फल या लाभ दिखाई नहीं देते। इसलिए सुधारकों तथा सुधारवादी संगठनों को हतोत्साहित हुए बिना

'स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारा सेवितो दृढ़भूमिः।'

(योगदर्शन १.१४)

पतंजलि मुनि के इस सूत्र के अनुसार निरन्तर कार्य करते ही रहना चाहिए। आर्यसमाज सांख्यकार महर्षि कपिलजी के इस सूत्र में दृढ़ विश्वास रखकर चलता है जिसमें कहा गया है-

'उपदेश्योपदेष्ट्त्वात्तत्सिद्धिः । इतरथान्धपरम्परा।'

(सांख्यदर्शन ३.७९, ८१)

अर्थात् जब उत्तम-उत्तम उपदेशक होते हैं तब अच्छे प्रकार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सिद्ध होते हैं और जब उत्तम उपदेशक और श्रोता नहीं रहते तब अन्ध-परंपरा चलती है। फिर भी जब सत्पुरुष उत्पन्न होकर सत्योपदेश करते हैं तभी अंध-परंपरा नष्ट होकर प्रकाश की परंपरा चलती है। मूर्तिपूजा का अन्धविश्वास नैमित्तिक दोष है, अत: इसे पुरुषार्थ के द्वारा दूर भी किया जा सकता है।

सच्चिदानन्दजी की सलाह है कि आर्यसमाज को मूर्तिपूजा का खंडन नहीं करना चाहिए। परन्तु क्या आर्यसमाज के लिए ऐसा करना अर्थात् मूर्तिपूजा के खंडन को छोड़ देना अपने कर्त्तव्य-कर्म से पृथक् होने

जैसा नहीं होगा? वैसे भी पूरे विश्व में एकमात्र आर्यसमाज ही ऐसा धार्मिक आस्तिक संघ है जो मूर्तिपूजा आदि अन्धविश्वासों के खिलाफ़ अधिकारपूर्वक संघर्ष कर सकता है। आर्यसमाज विशुद्ध एकेश्वरवाद तथा ईश्वर के वेदोक्त स्वरूप का प्रतिपादन करता है। ऐसे में सच्चिदानन्दजी के ये सुझाव आर्यसमाज को धर्म-संशोधन के कार्य में हतोत्साहित करने वाले प्रतीत होते हैं।

सच्चिदानन्दजी आर्यसमाज के विद्वानों से पूछते हैं कि- आपने मूर्तिपूजा का इतना खंडन किया लेकिन आपको क्या मिला? आपने क्या खोया क्या पाया? क्या सच्चिदानन्द जी को यह पता नहीं है कि महर्षि दयानन्दजी एवं आर्यसमाज के मूर्तिपूजा विरुद्ध अभियान से प्रेरित होकर लाखों लोग मूर्तिपूजा से पृथक् होकर वेदोक्त ईश्वर की सन्ध्या-उपासना के मार्ग पर आरूढ़ होकर पातंजल योग-पद्धति से योगाभ्यास कर रहे हैं? जब महर्षिजी ने यह कार्य आरम्भ किया था तब तो वे एकाकी थे, परन्तु आज उनके वैदिक मिशन को आगे बढ़ानेवाले लाखों लोग विश्वभर में फैले हुए हैं। इसलिए सच्चिदानन्दजी को ऐसा प्रश्न आर्यसमाज से न पूछकर साकारवादी मूर्तिपूजक, व्यक्तिपूजक मत-संप्रदायों के विद्वानों से पूछना चाहिए कि आप लाखों-करोड़ों लोग विगत कई हजार वर्षों से इन विभिन्न जड़ देवताओं की पूजा-अर्चना कर रहे हो इससे आपको क्या हासिल हुआ? इन साकारवादी, अवतारवादी, मूर्तिपूजकों के अज्ञान के कारण मानव समुदाय -विशेष रूप से हमारा भारतीय समाज- सहस्र मत-मतान्तरों में विभाजित हो गया और वास्तविक ईश्वर की सरल, सार्थक, ज्ञानमूलक उपासना पद्धति संसार से विलुप्त सी हो गई और हमारे देश और समाज की सर्वथा हानि हुई। सच्चिदानन्दजी को तो इन मतवादियों को सिंहावलोकन करने का सुझाव देना चाहिए कि इन हजारों वर्षों की मूर्तिपूजा रूपी भ्रमणा में निमग्न रहकर आप लोगों ने क्या पाया क्या खोया?

मुझे ऐसा लगता है कि सच्चिदानन्दजी कहीं न कहीं ऐसा मानते हैं कि महर्षि दयानन्दजी की विद्वत्ता उच्च स्तर की थी इसलिए उन्होंने व्याकरण आदि के माध्यम से तत्कालीन पौराणिक विद्वानों के समक्ष यह सिद्ध कर दिया कि वेदों में मूर्तिपूजा नहीं है, अन्यथा वेदों में ऐसे मंत्र भी हैं कि जिनके द्वारा मूर्तिपूजा की सिद्धि की जा सकती है। इसलिए सच्चिदानन्दजी ने महर्षि दयानन्दजी का गुजराती भाषा में जो जीवन चरित्र लिखा है उसमें भी उन्होंने एक स्थान पर ऐसे संकेत दिए हैं कि जिस से पाठकवर्ग को ऐसा लगे कि महर्षिजी के समय में ऐसे विद्वान् नहीं थे जो वेदमंत्रों से मूर्तिपूजा की सिद्धि कर सकते थे। सच्चिदानन्दजी ने वहाँ जो लिखा है, इसका हिंदी अनुवाद इस प्रकार है- ''उनकी (दयानन्दजी की) विद्वत्ता अगाध थी। व्याकरण के बल पर उन्होंने वेदों के देवता-परक माने जाने वाले मंत्रों को ब्रह्मपरक सिद्ध किया, क्योंकि उनका हेतु वेदों में से एकेश्वरवाद सिद्ध करने का था। तत्कालीन पंडित लोग वेदों को पढ़ते ही नहीं थे, इसलिए उनके सामने टिक नहीं सकते थे। यद्यपि आगे चलकर अनेक लोग वेदाध्ययन करने लगे और उन्होंने अपने अनुकूल मनपसन्द प्रमाण भी प्राप्त कर लिए।'' (महर्षि दयानन्द गुजराती जीवनचरित्र, निवेदन, पृष्ठ १२) इसलिए यहाँ इस व्याख्यान में भी सच्चिदानन्दजी ने अपने मन की इस धारणा को व्यक्त करते हुए लिखा है कि- ''उसकी (आर्यसमाज की) मुख्य युक्ति है कि वेदों में कहीं भी मूर्तिपूजा नहीं है । **'न तस्य प्रतिमाऽअस्ति'** ऐसे वाक्य वे बार-बार प्रस्तुत करते हैं। मानो कि वेदों में मूर्तिपूजा नहीं है। यद्यपि उत्तरवर्ती विद्वानों ने वेदों में से भी कहीं न कहीं मूर्तिपूजा के समर्थन में मंत्र खोज निकाले हैं।''

यदि सच्चिदानन्दजी वास्तव में ऐसा मानते हैं कि वेदों में मूर्तिपूजा समर्थक मंत्र हैं, तो उनका दायित्व बनता है कि वे ऐसे मंत्र अर्थ सहित प्रस्तुत करें ताकि उन पर विचार किया जा सके। आर्यसमाज मूर्तिपूजा को वेद-विरुद्ध एवं अतार्किक सिद्ध करने के लिए सर्वदा उद्यत

है। कितने आश्चर्य की बात है सच्चिदानन्दजी ने स्वयं अवतारवाद के खंडन में एक स्वतंत्र पुस्तक 'क्या ईश्वर अवतार लेता है?' लिखी है और वे अवतारवाद के कटु आलोचक हैं, परन्तु मूर्तिपूजा का समर्थन करने में उनको कोई संकोच या असुविधा नहीं होती है। यहाँ तक कि वे आर्यसमाज को भी प्रकारांतर से ऐसी नसीहत देना नहीं चूकते हैं कि मूर्तिपूजा-खंडन के विषय में आर्यसमाज को कुछ झुकना चाहिए, कुछ छूट देनी चाहिए, कुछ कम्प्रोमाइज़ करना चाहिए, इत्यादि । ध्यातव्य है कि सच्चिदानन्दजी ने अपने दंताली आश्रम के परिसर में ही कई वर्षों से एक मंदिर खोल रखा है, जिसमें जड़ प्रतिमाओं का पौराणिक ढंग से पूजा-अर्चन होता रहता है।

इस व्याख्यान में सच्चिदानन्दजी ने आर्यसमाज द्वारा किए जाने वाले खंडन कार्यक्रम को लेकर भी अपना असन्तोष प्रकट किया है। वे लिखते हैं कि-"...लेकिन जितना खंडन आर्यसमाज ने इतर सम्प्रदायों का किया है उतना किसी ने भी नहीं किया। आर्यसमाज की पहचान ही खंडनकर्त्ता के रूप में हो गई है। इसलिए हम यहाँ थोड़ा-सा विवरण देकर उसे संज्ञान में लेने की सलाह देना चाहते हैं कि इतना सारा खंडन करने के बाद भी किस क्षेत्र में कितनी सफलता मिली?"

सच्चिदानन्दजी को यह विदित ही होगा कि महर्षि दयानन्दजी की प्रचार शैली के दो विभाग थे- मंडन और खंडन। वे वेदोक्त धर्म का मंडन करते थे और वेद-विरुद्ध मत-पंथ-सम्प्रदायों का खंडन करते थे। दूसरे शब्दों में सत्य का मंडन और असत्य का खंडन। यह कार्य उन्होंने अपना कर्त्तव्य समझकर आजीवन किया और आर्यसमाज के नियमों में भी इस बात को समन्वित करते हुए उन्होंने आदेश दिया कि- अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए, और सत्य को ग्रहण करने के लिए और असत्य को छोड़ने के लिए सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

आर्यसमाज द्वारा खंडन-मंडन का यह कार्य परोपकार एवं लोकहित की भावना से किया जाता है, अपने स्वार्थ या अन्यों को हानि पहुंचाने की दृष्टि से यह कार्य नहीं किया जाता है। इसके बदले में जैसा महर्षि दयानन्दजी को अपमान, अवहेलना, उपेक्षा, तिरस्कार, घृणा, अपप्रचार आदि को सहन करना पड़ा था, कुछ ऐसी ही स्थिति आज भी आर्यसमाज के प्रचारकों की है। खंडन-मंडन का कार्य जितना संवेदनशील है, उतना ही साहस का भी है।

महर्षि दयानन्दजी ने अपने ग्रंथों में मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय का १६२वां श्लोक उद्धृत किया है, जिसमें कहा गया है-

सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्यमुद्विजेत विषादिव।
अमृतस्येव चाकाङ्क्षेदवमानस्य सर्वदा।।

अर्थात् वही ब्राह्मण समग्र वेद और परमेश्वर को जानता है जो प्रतिष्ठा से विष के तुल्य सदा डरता है और अपमान की इच्छा अमृत के समान किया करता है। (सत्यार्थप्रकाश का तीसरा समुल्लास) महर्षिजी ने यही श्लोक संस्कारविधि ग्रंथ के संन्यास प्रकरण में भी उद्धृत किया है और संन्यासियों के कर्त्तव्यों का वर्णन करते हुए लिखा है-

"संन्यासी जगत् के सम्मान से विष के तुल्य डरता रहे और अमृत के समान अपमान की चाहना करता रहे, क्योंकि जो अपमान से डरता और मान की इच्छा करता है, वह प्रशंसक होकर मिथ्यावादी और पतित हो जाता है। इसलिए चाहे निंदा चाहे प्रशंसा, चाहे मानचाहे अपमान, चाहे जीना चाहे मृत्यु, चाहे हानि चाहे लाभ हो, चाहे कोई प्रीति करे चाहे वैर बांधे, चाहे अन्नपान वस्त्र उत्तम स्थान न मिले वा मिले, चाहे शीत उष्ण कितना ही क्यों न हो, इत्यादि सबका सहन करे और अधर्म का खंडन तथा धर्म का मंडन सदा करता रहे। इससे परे उत्तम धर्म दूसरे किसी को न माने। परमेश्वर से भिन्न किसी की उपासना न करे। न वेदविरुद्ध कुछ माने।

परमेश्वर के स्थान में सूक्ष्म वा स्थूल तथा जड़ और जीव को भी कभी न माने। आप सदा परमेश्वर को अपना स्वामी माने, और आप सेवक बना रहे। वैसा ही उपदेश अन्य को भी किया करे। जिस-जिस कर्म से गृहस्थों की उन्नति हो, वा माता, पिता पुत्र, स्त्री, पति, बन्धु, बहिन, मित्र, पड़ोसी, नौकर, बड़े और छोटों में विरोध छूटकर प्रेम बढ़े, उस-उसका उपदेश करे। जो वेद से विरुद्ध मत-मतान्तर के ग्रंथ बायबल, कुरान, पुराण, मिथ्याभिलाप तथा काव्यालङ्कार कि जिनके पढ़ने-सुनने से मनुष्य विषयी और पतित हो जाते हैं, उन सबका निषेध करता रहे। विद्वानों और परमेश्वर से भिन्न न किसी को देव तथा विद्या, योगाभ्यास, सत्संग और सत्यभाषणादि से भिन्न न किसी को तीर्थ और विद्वानों की मूर्तियों से भिन्न पाषाणादि मूर्तियों को न माने, न मनवावे। वैसे ही गृहस्थों को माता-पिता, आचार्य, अतिथि, स्त्री के लिये विवाहित पुरुष और पुरुष के लिये विवाहित स्त्री की मूर्ति से भिन्न किसी की मूर्ति को पूज्य न समझावे, किन्तु वैदिक मत की उन्नति और वेदविरुद्ध पाखंड मतों के खंडन करने में सदा तत्पर रहे। वेदादिशास्त्रों में श्रद्धा और तद्विरुद्ध ग्रंथों वा मतों में अश्रद्धा किया कराया करे। आप शुभगुण, कर्म, स्वभावयुक्त होकर सबको इसी प्रकार के करने में प्रयत्न किया करे और जो पूर्वोक्त उपदेश लिखे हैं, उन-उन अपने संन्यासाश्रम के कर्त्तव्यकर्मों को किया करे। खंडनीय कर्मों का खंडन करना कभी न छोड़े। आसुर अर्थात् अपने को ईश्वर ब्रह्म मानने वालों का भी यथावत् खंडन करता रहे। परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और न्याय आदि गुणों का प्रकाश करता रहे। इस प्रकार कर्म करता हुआ स्वयम् आनन्द में रहकर सबको आनन्द में रक्खे।''

सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास में महर्षिजी ने उन संन्यासियों के सम्बन्ध में लिखा है जो खंडन-मंडन से पृथक् रहकर जगत् से माथापच्ची करना नहीं चाहते। महर्षिजी ने लिखा है-

''ये संन्यासी लोग ऐसा समझते हैं कि हमको खंडन-मंडन से क्या प्रयोजन? हम तो महात्मा हैं! ऐसे लोग भी संसार में भार रूप हैं। जब ऐसे हैं तभी तो वेदमार्ग-विरोधी वाममार्गादि सम्प्रदायी, ईसाई, मुसलमान, जैनी आदि बढ़ गये। अब बढ़ते जाते हैं और इनका नाश होता जाता है तो भी इनकी आंख नहीं खुलती! खुले कहाँ से? जो कुछ उनके मन में परोपकार-बुद्धि और कर्त्तव्य-कर्म करने में उत्साह होवे!''

यह चिंतन है महर्षि दयानन्दजी का जिसमें इस बात पर बल दिया गया है कि 'अधर्म का खंडन तथा धर्म का मंडन सदा करता रहे।' और 'खंडनीय कर्मों का खंडन करना कभी न छोड़े'। उनका ध्येय वाक्य था-

'सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।'

(मुण्डकोपनिषद् ३.१.६)

अर्थात् सर्वदा सत्य का विजय और असत्य का पराजय और सत्य ही से विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है। इस दृढ़ निश्चय के आलंबन से आप्त लोग परोपकार करने से उदासी न होकर कभी सत्यार्थप्रकाश करने से नहीं हटते। (सत्यार्थप्रकाश की भूमिका) महर्षिजी को भर्तृहरिजी का निम्न श्लोक अत्यन्त प्रिय था, जिसे उन्होंने अपने जीवन का निर्देशक सिद्धान्त बना लिया था-

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणम् अस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।।

(नीतिशतक ८४)

अर्थात् नीति को जानने वाले लोग चाहें निंदा करें या प्रशंसा, धन आए या जाए, मृत्यु अभी आ जाए या चिरकाल के बाद आए, परन्तु धीर लोग न्याय के मार्ग से एक कदम भी विचलित नहीं होते।

क्रमशः

८/१७ टाउनशिप, पो. नर्मदानगर, भरूच (गुजरात)-३९२०१५, मो. ९८७९५२८२४७

आर्यसमाज के प्रेरक अनूठे विलुप्त इतिहास का अनावरण

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु

'कुछ स्वाध्यायशील धर्मानुरागी सज्जनों ने चलभाष पर कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर देने को कहा। मुझे उनके प्रश्न सर्वोपयोगी तथा हितकर लगे सो उनका उत्तर परोपकारी में देने को कहा। उनमें से कई एक का प्रश्न था कि आपने आर्यसमाज के इतिहास का सम्पादन व लेखन कार्य जो किया है क्या उसमें समय-समय पर आर्यों के प्रचण्ड बहिष्कार की लुप्त हुई घटनाओं पर भी कुछ प्रकाश डाला है?

उन्हें बताया गया कि पहली बार आर्यसमाज के इतिहास में मैंने आर्यों को बहिष्कार की, यातनायें देने की अधिकतम घटनाओं को खोज कर प्रामाणिक इतिहास लिखा है। उस इतिहास ग्रन्थमाला के तीसरे भाग में भी ऐसी बहुत पठनीय सामग्री होगी। यहाँ केवल ऐसी एक घटना विशेष का उल्लेख किया जाता है। यह घटना श्री डॉ. वेदपाल जी के ग्राम की मेरठ जनपद की घटना है।

उसकी सब से बड़ी विलक्षणतायें दो हैं। इन दो विलक्षणताओं के कारण इसे यहाँ देने के लिये मैंने चुना है। पहली विशेषता या विलक्षणता तो इस घटना की यह है कि मात्र चौबीस घण्टे के भीतर इस बहिष्कार की हवा आर्यों ने अपनी दृढ़ता से निकाल दी।

इसकी दूसरी विलक्षणता यह है कि देश भर में मेरठ जनपद के एक छोटे से ग्राम में एक अडिग आर्यवीर के बहिष्कार की टक्कर में एक वीराङ्गना माता ने कूदकर विरोधी पोपों के छक्के छुड़ा दिये। मुझे देश भर में बहिष्कार की घटनाओं के इतिहास में केवल एक ही वीर माता की हुँकार ललकार आर्यों की प्रचण्ड विजय का कारण होने का प्रबल प्रमाण मिला है। यह वीरमाता श्री डॉ. वेदपाल जी की सगी दादी जी थीं। क्या यह कोई छोटी सी बात थी?

पाठक यह मत समझें कि अपनी माता जी की शूरता के कारण चौ. रणधीर सिंह संघर्ष में विजयी रहे। मेरा भाव तो मात्र यह है कि महाशय रणधीरसिंह तो दृढ़ धीर वीर थे ही। उनकी वीराङ्गना माता की हुँकार से पोप दल के दिल तो ऐसे दहल गये कि अपने बेगाने सब आर्यसमाज की अद्भुत विजय देखकर दंग रह गये।

झट से विजय प्राप्त- आर्यसमाजी विद्वानों को सूझबूझ व सजगता से इस इतिहास का प्रचार करना होगा कि वीर माता की हुंकार के कारण आर्यवीर महाशय रणधीरसिंह के चरणों को विजय श्री ने झट से सगर्व चूम लिया।

प्रकाशकों का इतिहास कहाँ?- कुछ सूझबूझ वाले आर्यबन्धुओं ने यह अच्छा प्रश्न पूछा है कि आर्य प्रकाशकों के इतिहास पर भी कहीं कुछ लिखा गया है क्या?

मेरा निवेदन है कि आर्यसमाज के डेढ़ सौ वर्ष के इतिहास में पहली बार इसी इतिहास ग्रन्थमाला में न केवल आर्य प्रकाशकों पर विस्तार से सप्रमाण प्रकाश डाला गया है प्रत्युत आर्य साहित्य विक्रेताओं पर भी बड़े विस्तार से लिखा गया है। आर्य प्रकाशकों के बलिदान पर भी मैंने पहली बार पूरा-पूरा प्रकाश डाला है। केवल महाशय राजपाल जी ने ही बलिदान नहीं दिया। प्रसिद्ध आर्य प्रकाशक वज़ीरचन्द जी का सन् १९४७ में बलिदान हुआ। उन्हें सब भूल चुके हैं। आर्य प्रकाशकों पर अभियोग चलाये गये। महात्मा मुंशीराम जी से लेकर पं. भीमसेन जी, पं. नरेन्द्र जी, लाला गोविन्दराम जी, विजय जी, अजय जी सब पर चलाय गये अभियोगों पर मैंने तो लिखा है। 'आर्य मुसाफिर' मासिक का १९१५ ई. में शहीद अंक शहीद किया गया। मैंने उस पर भी लिखा

है। पं. लेखराम जी के साहित्य पर मुसलमानों द्वारा सात बार केस चलाये गए। पूजनीय पण्डित जी सातों में विजयी रहे। पण्डित जी को कोर्ट में पेश तक होना नहीं पड़ा।

लाला लाजपतराय जी के देश से निष्कासित किये जाने पर आर्य नेता श्री महाशय कृष्ण सम्पादक प्रकाश पर भी सरकार ने अभियोग चलाकर महाशय जी को जेल में डालना चाहा था। महात्मा श्री मुंशीराम इस केस की आग में कूद पड़े। आर्यसमाज विजयी रहा। यह इतिहास आर्यसमाज भूल चुका था। मैंने इसका भी ठीक-ठीक अनावरण कर दिया। मैं लिखे जा रहा हूँ। आर्यसमाज के नेता तथा उनके प्रेमी लेखक सब चुप हैं। इतिहास का अनावरण आर्यसमाज को जँचा या नहीं? यह कौन बतावे?

सिन्ध में वीर नाथूराम आर्यलेखक को कोर्ट में छुरा मारकर शहीद कर दिया गया। आर्यसमाज में इतिहास की दुहाई देने वाले अनेक लेखक हुए हैं। वीर नाथूरा (माता-पिता का इकलौता पुत्र) पर केवल तीन लेखकों ने आज तक लिखा है। वे तीन मुख्य लेखक हैं श्री पं. नरेन्द्र जी, श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज और राजेन्द्र 'जिज्ञासु'। इतिहास का लेखा-जोखा करना भी समाज भूल गया।

क्या चौधरी नवलसिंह रोहतक का था?- आर्यसमाज में एक नामी ऋषि भक्त आर्य मिशनरी, कवि, लेखक विद्वान् हुआ है। वह आर्यसमाज का एक निर्माता और तप:पूत था। ऋषि जी को सुनकर वह नररत्न आर्य बना था। सात खण्ड़ों के इतिहास पर पोथे लिखवाये गये। उसमें दूसरे भाग में प्रधान सम्पादक श्री सत्यकेतु ने पृष्ठ १८५ पर उसे रोहतक का निवासी लिखा है। एक सज्जन ने पूछा है कि आप तो उस आर्य लोककवि को उत्तर प्रदेश का बताते थे। अब मैं प्रश्नकर्त्ता का क्या समाधान करूँ? उसके ग्राम के आर्यों ने एक बार नवलसिंह जी पर मेरा लेख पढ़कर एक भावपूर्ण पत्र लिखा था कि आपने हमारे ग्राम के इस नररत्न के जीवन पर नई-नई जानकारी देकर हमारे गाँव का नाम ऊँचा कर दिया। अब सबसे बड़े इतिहासकार और उसकी टोली के लोगों को मैं कुछ नहीं कह सकता। समय आने दो मैं इन के ज्ञान के चमत्कार सबके सामने रखूँगा।

श्री यशवन्तसिंह वर्मा टोहानवी?- सात खण्डों के बड़े-बड़े पोथों वाले इतिहास के दूसरे भाग में हरियाणा के आर्यसमाज के इतिहास में देश-विदेश में विख्यात आर्य गीतकार नाटककार श्री यशवन्तसिंह जी के किसी भी लोकप्रिय गीत तथा नाटक का नाम तक न पाकर मैं दंग रह गया। एक समय था जब बड़े-बड़े पौराणिकों के घरों में श्री वर्मा का साहित्य मिलता था। सन् १९०४ में लाला लाजपतराय के देश से निष्कासित होकर माण्डले में बन्दी बनाये जाने से पूर्व आर्यसमाज अनारकली लाहौर के उत्सव पर शोभा यात्रा में श्री यशवन्त सिंह ने सारे नगरकीर्तन में अपने ऐतिहासिक क्रान्तिकारी गीत-

'उनकी इज्जत भी क्या खाक जिनको पगड़ी दें परदेसी'

गाकर अपनी मण्डली के साथ ऐसी धूम मचा दी कि लोगों ने विदेशी मलमल की पगड़ियाँ तथा अंग्रेजी टोप (Hat) उतार-उतार कर लाहौर की नालियों में फेंक कर स्वदेशी के आर्यसमाजी आन्दोलन का डंका बजा दिया। देश के इतिहास में यह घटना अनूठी थी और यह गीत अपने आप में एक इतिहास है।

मैंने उस मण्डली में सम्मिलित पं. मनसाराम जी वैदिक तोप के मित्रों से साक्षात्कार लेकर यह लुप्त इतिहास खोजा और इस गीत को खोज कर इसके कुछ पद्य आर्यसमाज के इतिहास में भी दिये हैं। यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य है कि इन हृदयहीन लेखकों ने उस निर्भीक आर्य गीतकार का नाम तक इस इतिहास में नहीं दिया।

इससे भी बढ़कर पानीपत के नामी आर्य साहित्यकारों, पं. मनसाराम वैदिक तोप, आर्य साहित्यकार विद्वान् लाला बनवारीलाल जी (पं. लेखराम के भक्त) तथा वर्तमान युग के पं. शान्तिप्रकाश जी आदि महान् विद्वानों तथा आचार्य प्रियव्रत जी जैसे प्रकाण्ड आचार्य वेदज्ञ को भी यह लेखक व प्रकाशक भूल गये। इस पाप कर्म पर मैं तो अश्रुपात न करूँ तो और क्या करूँ?

हरियाणा में आर्यसमाज के जन्मदाता- महर्षि ने हरियाणा में केवल रेवाड़ी में १३ दिन निरन्तर वेद प्रचार करके आर्यसमाज के आन्दोलन को जन्म दिया। पुराने सब विद्वान् जानते थे कि ऋषि जी वहाँ राव युधिष्ठिर सिंह पुत्र राव तुलाराम की विनती पर पधारे थे। हरियाणा में आर्यसमाज का जन्मदाता राव युधिष्ठिर सिंह ही था। वह आधुनिक काल का हरियाणा का पहला सुधारक था। आर्य समाचार मासिक मेरठ में ऋषि के जीवनकाल में इस आर्यपुरुष का नाम हरियाणा से बार-बार छपा मिलता है।

एक अन्य आर्यपुरुष हरफूलसिंह जाट गोभक्त का नाम भी एक बार छपा मिलता है। इसी राव युधिष्ठिर सिंह की पत्नी माता लाडकँवर आगे चलकर वहाँ आर्यसमाज स्थापित होने पर आर्यसमाज की सर्वसम्मति से प्रधाना चुनी गई। विश्व में जब कहीं महिलाओं को vote (मतदान) का अधिकार तक प्राप्त नहीं था। आर्यसमाज में इस माता को बड़ी शान से प्रधान चुना गया।

महाराष्ट्र इतिहास परिषद् ने सन् १९८६ में मेरे शोध लेख में विशेष रूप से इसी खोज के लिये मुझे सर्वसम्मति से प्रथम पुरस्कार दिया था। आर्यसमाज इसे अपनी उपलब्धि मानकर भी इतिहास में छिपाता है। इसे आप क्या कहेंगे? यह आर्यसमाज के लिये एक अशोभनीय पाप कर्म है कि इतिहास का गला घोंटा जावे।

किसी भी नेता के जीवन में किसी क्रान्तिकारी का उस युग में न तो नामोल्लेख मिलता है और न किसी क्रान्तिकारी का कोई पत्र ही मिलता है। ऋषि के पत्र व्यवहार तथा ऋषि जीवन में राव तुलाराम, श्रीकृष्ण सिंह बारहट, श्यामजी कृष्ण वर्मा आदि के नाम भी हैं और पत्र भी छपे मिलते हैं। आर्यसमाज इस इतिहास की धूम मचाने से कतराता घबराता है। अपवाद तो हैं ही। यह मैं मानता हूँ।

पाठक वृन्द इस सात खण्डों के हरियाणा के इतिहास में रेवाड़ी का इतिहास तो ऐसे दबाया, छुपाया गया है कि इस युग के महान् आर्यसंन्यासी रेवाड़ी क्षेत्र में जन्मे पूज्य स्वामी सर्वानन्द जी, स्वामी सोमानन्द जी, सन्तोषानन्द जी व महाशय हीरालाल जी का नाम उल्लेख नहीं है। क्या इनकी देन से किसी को इनकार है? डॉ. वेदपाल जी सरीखे विद्वान् यदि इधर तनिक ध्यान दें तो यह अनर्थ दूर किया जा सकता है।

एक वे हैं कि जिनको आती है बनानी सूरत
एक हम हैं कि लिया अपनी ही सूरत को बिगाड़

वर्तमान काल में कई आर्यों पर अभियोग चलाकर उन्हें सताया प्रताड़ित किया गया यथा पं. शान्तिप्रकाश जी, राजेन्द्र 'जिज्ञासु', श्री पं. निरञ्जनदेव जी आदि। इतिहास लिखने की डींगें मारने वालों ने इस विषय में एक शब्द भी कभी नहीं लिखा। ऐसा अनर्थ स्वामी श्रद्धानन्द और लाला लाजपतराय के समाज में देखकर कलेजा फटता है। यह कोई जीवन का लक्षण नहीं है।

स्वामी सत्यप्रकाश जी की कामना व आदेश- मैंने दो-तीन बार श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी पर लिखते हुये उनसे सम्बन्धित यह ऐतिहासिक संस्मरण लिखा है कि मैं सन् १९८३ में दीनानगर दयानन्द मठ में पहुँचा तो पता चला कि श्री स्वामी जी वहाँ पधारे हुये हैं। मैं उनके कक्ष में जाने ही वाला था कि वे मेरे कमरे में मिलने आ

गये और कहा कि ऋषि की बलिदान स्मारिका के लिये आप जो भी लेख देंगे वह छपेगा ही, परन्तु मैंने आपके लिये एक विशेष विषय सोचा है। उसके लिये मैं आपको अत्यन्त उपयुक्त लेखक मानता हूँ।

वह विषय था, आर्यसमाज के विरोधियों के आक्रमणों के उत्तर-प्रत्युत्तर में छपा आर्यविद्वानों का साहित्य। मैंने तत्काल उनका आदेश शिरोधार्य किया। बहुत श्रम से खोजपूर्ण लेख लिखकर भेज दिया। प्राप्त होते ही गद्‌गद् होकर आपने लिखा, ''आपका सुन्दर लेख प्राप्त हो गया।'' यह पत्र आज भी मेरे पास सुरक्षित है। आर्यसमाज में समर्पित पूज्य महापुरुषों के पत्र किसने सुरक्षित किये हैं? जिन्होंने ऋषि के पत्र संग्रहीत कर भक्तिभाव से छपवाये। वे सब धन्यवाद के पत्र हैं। मुझे यदि सहयोग मिला तो मैं आर्यसमाज के मूर्धन्य महापुरुषों और विद्वानों के ऐसे सैंकड़ों पत्र प्रकाशित करके नया इतिहास रचकर दिखाऊँगा। प्रभु मुझे ऐसा सामर्थ्य अवश्य देंगे।

परोपकारी ग्राहकों हेतु आवश्यक सूचना

परोपकारी के अनेक सदस्यों की यह शिकायत रहती है कि उन्हें पत्रिका प्राप्त नहीं हो रही है। रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका भेजने पर डाक व्यय बढ़ जाता है। सदस्यों से निवेदन है कि जो रजिस्टर्ड डाक से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं, वह निम्नानुसार डाक व्यय सभा के खाते में अग्रिम रूप से जमा करके कार्यालय को सूचित कर दें। रजिस्टर्ड डाक का व्यय (पत्रिका शुल्क के अतिरिक्त) निम्न प्रकार है-

१. प्रत्येक अंक (वर्ष भर २४ अंक) रजिस्टर्ड डाक से मंगाने पर - डाक व्यय - १०००/-

२. एक मास के दो अंक- एक साथ मंगाने पर वार्षिक - डाक व्यय - ५००/-

३. एक वर्ष के २४ अंक- एक साथ मंगाने पर - डाक व्यय - १००/-

बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम

०१.	वैदिक मन्त्रों की स्वर-संधान-कार्यशाला	-	१४ से २० अगस्त-२०२३
०२.	दम्पती शिविर	-	२४ से २७ अगस्त-२०२३
०३.	डॉ. धर्मवीर स्मृति दिवस	-	०६ अक्टूबर-२०२३
०४.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	२९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर-२०२३
०५.	ऋषि मेला	-	१७, १८, १९ नवम्बर-२०२३

कृपया शिविर में भाग लेने के इच्छुक शिविरार्थी पूर्व से ही प्रतिभाग की सूचना दें।

उपनिषदों की कहानियां-

परम-पद-२

श्री साधु सोमतीर्थ

गतांक जुलाई द्वितीय से आगे

आचार्य सत्यकाम जाबाल के आश्रम में रहकर ब्रह्मचारी उपकोशल ने बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया। प्राचीन शिक्षा पद्धति आजकल की शिक्षा-पद्धति से सर्वथा ही भिन्न प्रकार की थी। वह कम खर्च वाली थी और सरल भी। ऐसा सन्देह करना भी व्यर्थ है कि प्राचीन काल की शिक्षा घटिया होती होगी। उपकोशल ने पहले सामान्य शिक्षा प्राप्त की। फिर विशेष और प्रयोगात्मक शिक्षा ग्रहण की। फिर भौतिक विज्ञान में दक्षता पाई वाष्प, अग्नि और विद्युत् विज्ञान के सभी रहस्यों और प्रयोगों को उसने भली प्रकार जाना। फिर उसने आत्मा, परमात्मा, बन्ध और मोक्ष-विषयक सम्पूर्ण तत्त्वज्ञान को भी प्राप्त कर लिया। उसने बौद्धिक और क्रियात्मक विद्या के दोनों ही क्षेत्रों में उच्च योग्यता प्राप्त कर ली। प्राचीन शिक्षा-पद्धति में ब्रह्मचर्य व्रत का परिपालन विद्यार्थियों के लिये सर्वप्रथम और अनिवार्य शर्त है। यह एक ऐसा व्रत है जिस पर आजकल के तथाकथित शिक्षा-विधान यथोचित ध्यान नहीं देते आजकल के कॉलेजों में तो ब्रह्मचर्य व्रत की स्थिति अत्यन्त दुर्बल है। रही सही कमी सह-शिक्षा विधान ने पूरी कर दी है। आजकल के लोग, विशेष रूप से नई पीढ़ी के युवक-युवतियाँ तो इस बात को लगभग भूल ही चुके हैं कि मानव जीवन और सामाजिक जीवन का मूलाधार यह ब्रह्मचर्य-व्रत-परिपालन ही है जो सच्चे ब्रह्मचारी होते हैं, वे रोगों से सुरक्षित रहते हैं, उनका शारीरिक और बौद्धिक विकास ठीक-ठीक होता है। ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों में भी वे शीघ्र ही चमक उठते हैं।

प्राचीन शिक्षा पद्धति की दूसरी विशेषता तपस्या पूर्ण जीवन है। इस पद्धति में आचार्य भी तपस्वी होता है, शिष्य भी। इसी के फलस्वरूप शिष्यों में वह उत्साह, साहस, आत्म विश्वास, सहिष्णु-भाव मानव-प्रेम सर्वहित और अपने कर्त्तव्य पालन का अनुराग उत्पन होता है जो कि मनुष्य के जीवन-संघर्ष में विजयी और यशस्वी बना देता है ।

तीसरी विशेषता प्राचीन शिक्षा पद्धति की यह है कि आचार्य और शिष्य आश्रम में पास ही पास रहते हैं। इसलिये आचार्य शिष्य की योग्यता, रूचि और सभी क्षमताओं तथा प्रवृत्तियों को भली प्रकार जान लेता है, उनको ठीक समय पर ठीक दिशा में प्रेरित करके, उनके भविष्य को उज्वल बना देता है। इसके साथ ही निकट सम्पर्क में रहने से आचार्य के उत्तम जीवन का उत्तम प्रभाव भी शिष्य वर्गों पर पड़ता है। प्राचीन पद्धति के आचार्य का अन्तरङ्ग और बहिरंग एवं व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन एक ही प्रकार का होता है, भिन्न प्रकार का नहीं।

चौथी विशेषता प्राचीन पद्धति की यह है कि पढ़ने-पढ़ाने के आश्रम आबादियों से दूर बनाये जाते थे। सांसारिक झमेले वहाँ शिक्षा कार्य में बाधक नहीं हो सकते थे। जलवायु की शुद्धता और नैसर्गिक जीवन शिष्यों के शारीरिक और बौद्धिक विकास में पूरे-पूरे सहायक होते थे। आजकल की शिक्षा संस्थाओं में यह विशेषता है ही नहीं आजकल जहाँ-तहाँ ''गुरुकुल'' नाम वाले कुछ संस्थान हैं, वे भी सामान्य स्कूलों जैसे ही हैं। इनको प्राचीन शिक्षा संस्थानों के नमूने न समझा जाए ये तो प्राचीनता प्रेमियों के स्कूल हैं।

आचार्य सत्यकाम जाबाल के शिष्यों की शिक्षा पूरी हो जाती है, तो वे अन्य सब ब्रह्मचारियों को तो विधिपूर्वक विदा कर देते हैं, परन्तु उपकोशल को विदा नहीं करते। इसके कई कारण हो सकते है। यथा शिक्षा में कमी का होना या उसे अधिक योग्य समझकर उसे और भी अधिक

महत्त्वपूर्ण शिक्षा का देना। दूसरा कारण प्रधान प्रतीत होता है।

घर जाने की अनुमति न पाकर उपकोशल उदास हो जाता है। आचार्य की पत्नी उपकोशल को घर जाने की अनुमति देने का अनुरोध करती है। इसकी बातों पर भी आचार्यजी ध्यान नहीं देते। उत्तम निर्णायक विद्वान् सिफारिशों, विरोधों और प्रलोभनों के कारण अपने उत्तम निर्णयों को बदला नहीं करते। उपकोशल अधिक उदास हो जाता है। खाना-पीना भी छोड़ देता है। आचार्यजी अचानक ही अज्ञातवास में चले जाते हैं। इसका एक कारण तो यह प्रतीत होता है कि उपकोशल को अग्नि-विद्या के स्वतन्त्र प्रयोग और अनुसन्धान करने का अवसर मिल जाये, विद्या के साथ ही उसका आत्म विश्वास भी बढ़े। दूसरा कारण यह हो सकता है कि अध्यात्मवाद की शिक्षा देने के लिये आचार्यजी अज्ञातवास में रहकर तैयारी करें।

उपकोशल खाने-पीने के अनुराग को छोड़ चुका है। आचार्य जी मौजूद नहीं है। उपकोशल अकेला रहकर भी अग्नि-विद्या का विचार और अनुसन्धान करता है। अपने प्रयोगों के आधार पर वह नये-नये तत्त्वों और सिद्धान्तों को खोज लेता है। नये-नये आविष्कार करता है। प्रतिदिन उसकी उन्नति होती है। वह विज्ञान के सूक्ष्मतम रहस्यों का पता लगाने में सफल होता है। यह विज्ञान उसको किसी व्यक्ति विशेष से नहीं, स्वयं अग्नियों से ही प्राप्त होता है। प्रकृति-दर्शन और अग्नि-विद्या के प्रयोगों से ज्ञान विज्ञान की उन्नति स्वाभाविक ही है। यह बात बारम्बार हमारे ध्यान में आती है कि आचार्य जी ने भी इस प्रकार सोच समझकर के ही उपकोशल को स्वतन्त्रतापूर्वक विचार और प्रयोग करने का अवसर प्रदान किया था। हमें ज्ञात है कि आचार्य गौतम के आश्रम में जाकर स्वयं आचार्य सत्यकाम जाबाल ने भी प्रकृति निरीक्षण के द्वारा ही विज्ञान और अध्यात्मवाद के सूक्ष्म तत्त्वों को जाना था। ऐसा आचार्य जिसकी शिक्षा दीक्षा में प्रकृति दर्शन, आत्म-निरीक्षण और क्रियात्मक प्रयोगों का ही अधिक समावेश रहा हो, वह यदि अपनी शिष्य परम्परा के लिये भी प्रकृति निरीक्षण प्रधान शिक्षा पद्धति का उपयोग करे तो यह ठीक ही है।

अग्नियों से उपकोशल को जो उपदेश मिले, समझने समझाने के लिये उनको चार उपदेश कह सकते हैं। पहला उपदेश तीनों अग्नियों का सम्मिलित उपदेश है। दूसरा उपदेश गार्हपत्य अग्नि और दक्षिण अग्नि देती है। तीसरा उपदेश आहवनीय अग्नि देती है। जो कि उत्तराग्नि भी कहलाती है। फिर तीनों अग्नियां मिलकर उपकोशल को एक सूचना देती हैं कि इससे आगे का उपदेश तुझे अपने आचार्य से मिलेगा। अन्त में आचार्य का उपदेश मिलता है और उपकोशल की शिक्षा पूर्ण हो जाती है।

अग्नियों का प्रथम उपदेश है कि प्राण, कर्म और श्रम एक ही तत्त्व के तीन नाम हैं। यह तत्त्व नि:सन्देह ईश्वर ही है। ईश्वर ही तो सबका जीवनाधार है। वह प्राण के समान स्वार्थ रहित है, अत: उसका एक नाम 'प्राण' भी है। आस्तिक समुदायों का विज्ञान विचार केवल जड़ तत्त्वों तक ही सीमित नहीं होता, उसमें ईश्वर विचार भी समाविष्ट रहता है। जो प्राण है, वही 'कर्म' है। संस्कृत भाषा में सुन्दर और आनन्दमय को 'कर्म' कहते हैं। वह सुन्दर भी है, सुन्दरता का दाता भी। कवि का कथन है-

उसकी नजर में सूरत जचती नहीं किसी की।
जिस दिल में बस रहा हो या रब! जमाल तेरा।।

जो 'कर्म' है वही 'खम्' है। 'खम्' आकाश का एक प्रसिद्ध नाम है। आकाश के समान ही नित्य, निराकार और सर्वव्यापक होने से ईश्वर का भी एक नाम 'खम्' है। ईश्वर ही प्राण, कर्म तथा खम् है। इस उपदेश का साथ यह है कि ईश्वर ही सबका प्राणाधार, शोभा-दाता, असीम और निराकार है।

आचार्य सत्यकाम अग्नि विद्या के आचार्य है। उपकोशल विद्या का विद्यार्थी है प्रश्न होता है-यह अग्नि विद्या क्या है? कुछ लोग भौतिक अग्नि को ही 'अग्नि' समझते हैं। बड़े-बड़े विद्वान् कहलाने वाले लोग भी इस

भ्रान्ति में फंसे पड़े हैं। कुछ मनचले लोगों ने तो 'अग्नि' शब्द के अर्थों को ठीक-ठीक न समझकर, हम वैदिक धर्मियों को 'अग्नि-पूजक' नाम भी दे डाला है। 'अग्नि' शब्द के विषय में फैली हुई भ्रान्तियों को दूर करने के लिए वर्तमान युग के सर्वोपरि वेदवादी आचार्य महर्षि दयानन्द को भारी संघर्ष करना पड़ा था। अपने उद्योगों में वे पूर्ण सफल हो चुके हैं। वेदों के यौगिक अर्थों को जानने-खोलने की कुंजी संसार को मिल चुकी है। सन्देह का स्थान नहीं है। यदि कोई जान बूझकर शरारत करे, तब तो बात दूसरी है।

वेदों में और वेदों के समान ही ब्राह्मण ग्रन्थों में भी प्रसंगानुसार एक ही 'अग्नि' शब्द के विभिन्न अर्थ होते हैं। आग तो 'अग्नि' है ही सूर्य अग्नि है, विद्युत् अग्नि है, आत्मा अग्नि है, परमात्मा अग्नि है। इनके साथ ही क्रोध, द्वेष और पुरुषार्थ के लिये भी 'अग्नि' शब्द का प्रयोग होता है। नेता, सेनापति तथा पुरोहित भी 'अग्नि' कहलाते हैं। 'अग्नि' के विचार प्रसंगों में सभी प्रकार की अग्नियों का विचार कर्त्तव्य है।

जब एक विद्यार्थी प्रयोगशाला में प्रयोग कर रहा हो और आचार्य वहाँ पर उपस्थित न हो, तब यदि कोई नया रहस्य विद्यार्थी को ज्ञात हो जाये, तो प्रश्न होता है कि वह नया रहस्य विद्यार्थी को किसने बतलाया? उत्तर मिलता है कि प्रयोग ने यही बात उपकोशल के प्रयोगों में भी लागू होती है। तीन अग्नियों के प्रथम उपदेश का उल्लेख हो चुका है। दूसरा उपदेश गार्हपत्य अग्नि का है। यही वह अग्नि है जिसको भली प्रकार विकसित और प्रकाशित करके ही वह मनुष्य को वह योग्यता प्राप्त होती है, जो कि घर गृहस्थी के कामों में अपेक्षित है। घर में होने वाला प्रतिदिन का अग्निहोत्र चूल्हे में जलने वाली आग का प्रबन्ध, आजीविका की प्राप्ति के लिये होने वाला प्रतिदिन का पुरुषार्थ, भोजन को पचाने स्वस्थ रहने, उत्तम बुद्धि, निर्मल मन, शुभ कर्म से प्रीति, पापों और अपराधों से बचने को दृढ़ता, समाज कण्टकों का निरोध, शत्रुओं और हिंसक प्राणियों से आत्म रक्षा, दुष्टों को सन्मार्ग पर लाने के सभी उपाय, ये सब वे कार्य हैं जो कि गाईपत्य अग्नि के द्वारा ही सम्पन्न किये जाते हैं।

'गार्हत्य अग्नि' में उपकोशल को जो उपदेश दिया, उसमें सर्वप्रथम अग्नि, आदित्य, सूर्य, पृथ्वी और अन्न इन चार शब्दों का व्यवहार है। इनमें अग्नि और आदित्य उपभोक्ता हैं, प्राण हैं। पृथ्वी और अन्न उपभोग्य हैं, रयि हैं। भोगने वाले और भोगे जाने वाले इन दो प्रकार के पदार्थों के समवाय का नाम ही यह संसार है। जिसमें भोगने का सामर्थ्य नहीं है, उसके लिये तो यह सम्पूर्ण पृथ्वी भी व्यर्थ ही है। यदि कोई पृथ्वी और अक्ष का उपयोग करना चाहे, तो उसे उचित है कि वह अपने अन्दर भोग का सामर्थ्य पहिले उत्पन्न करे। उपभोग का यह सामर्थ्य, ढंग और प्रकार ही बस गार्हपत्य अग्नि है। हवन की आग घर की सुख शान्ति को बढ़ाने वाली है चूल्हे की आग घर की शक्ति, मान, मर्यादा और समृद्धि को बढ़ाने वाली है। परिवार के सदस्यों की खाने पकाने तथा पचाने की शक्ति परिवार और परिवार के सभी सदस्यों की सम्पन्नता, स्वस्थता और यश को बढ़ाने वाली है।

गार्हपत्य अग्नि का दूसरा उपदेश यह है कि सूर्य में जो शक्ति का प्रकाश है, वह मैं ही हूँ। इसका भाव यह है कि जिस प्रकार सूर्य पृथ्वी से नभ जल को खींचता है और उसे फिर पृथ्वी पर ही बरसा देता है, अपनी गरमी तथा रोशनी से प्राणियों और वनस्पतियों का हित करता है, नक्षत्रों ग्रहों और उपग्रहों के सन्तुलन को सुस्थिर रखता है और भी कई प्रकार से संसार को लाभ पहुँचाता है, उसी प्रकार गार्हपत्य अग्नि भी गृहस्थी के लिये हितकारी होती है। गार्हपत्य अग्नि को जानने में, प्रज्वलित करने में प्रयोग में लाने में, जो व्यय करना पड़ता है, समय लगता है, यह सब अन्त में लाभ की प्राप्ति के लिये ही होता है। वास्तव में यह गार्हपत्य अग्नि जीवित रहने और संसार में फूलने फलने की कला है। जो इस कला को जानता है, वह इसके लाभों को भी प्राप्त कर लेता

है। यह पुरुषार्थ का=कर्मयोग का उपदेश है।

दूसरी अग्नि 'दक्षिण-अग्नि' है। यह अपने उपदेश को जल, दिशा नक्षत्र और चन्द्रमान इन चार शब्दों से आरम्भ करती है। अन्न के बाद जल ही मनुष्य के लिये सबसे अधिक आवश्यक वस्तु है। दिशा का विचार पूर्व पश्चिम, उत्तर, दक्षिण चार दिशाओं के रूप में होता है। ऊपर नीचे को मिलाकर दिशाओं की संख्या छ: होती है। चार कोनों की चार उपदिशाओं को मिला कर दिशायें दश कहलाती हैं। ये सब व्यवहारिक और गौण भेद-प्रभेद हैं। तात्विक रूप में तो दिशा एक ही है। जो ''इधर, उधर, जिधर, किधर के व्यवहार का विषय है उसे दिशा कहते हैं। दिशा का व्यवहार या आरोप आकाश में ही होता है। अत: दिशा और आकाश में एक प्रकार का अभेद मौजूद है। 'दिशा' शब्द से ही आकाश का भी ग्रहण हो जाता है। आकाश के समान ही दिशा भी निराकार, नित्य और सर्वव्यापक है। जल का घर आकाश ही है। इसीलिये आकाश भी जल के समान सुख की वृद्धि करता है। सुख शान्ति को बरसाता है।

नक्षत्रों, ग्रहों और उपग्रहों का विस्तृत उल्लेख हमने एक पृथक् वेद-विचार प्रसंग में किया है। यहाँ उस विस्तृत विचार को दोहराने का अवकाश नहीं है। इस ब्रह्माण्ड में हमारे सौर-मण्डल से अधिक बड़े और भी अनन्त सौरमण्डल मौजूद हैं। दूर चमकते हुए नक्षत्र जो कि वास्तव में हमारे सूर्य से भी बड़े-बड़े सूर्य ही हैं, देखने पर आंखों पर ठण्डक, हृदय को प्रसन्नता, मन को उल्लास और आत्मा को आनन्द प्रदान करते हैं। चन्द्रमा तो है ही रस और आनन्द का भण्डार। इस प्रकार दक्षिण-अग्नि का उपदेश एक प्रकार से जल-विज्ञान, दिशा-विज्ञान, नक्षत्र-विज्ञान और चन्द्र-विज्ञान=मनोविज्ञान का उपदेश है। जिन्हें सुख शान्ति और आनन्द की जरुरत है, वह इसका अनुष्ठान करें।

तीसरी अग्नि आहवनीय-अग्नि है। उसका उपदेश प्राण, आकाश, द्युलोक और विद्युत् इन चार शब्दों से आरम्भ होता है। यह प्राण विज्ञान, आकाश विज्ञान, द्युलोक विज्ञान और विद्युत्-विज्ञान का उपदेश है। भूगोल और ज्योतिष विज्ञान भी आकाश-विज्ञान और द्युलोक-विज्ञान के अन्तर्गत आ जाते हैं। प्राण ईश्वर का नाम भी है, उपदेश के सुनने-सुनाने और सब प्रकार की गतिशीलता का सहायक आकाश है। सब गतियाँ-प्रगतियाँ आकाश में ही होती हैं। आकाश ही शब्द को एक स्थान से दूसरे स्थान में पहुँचाता है। आकाश हृदय की विशालता का भी सूचक है, स्वभाव की उदारता का भी लोक वह है, जहां सूर्य, चन्द्र, तारागण चमकते हैं। यह उन्नति, जीवन, ज्योति और जागृति का प्रतीक है। विद्युत् है तो अग्नि का ही सूक्ष्म रूप, परन्तु इसका अपना स्वतन्त्र महत्त्व है। विद्युत्-विज्ञान मानव-जीवन के ओज, तेज, प्रभाव, आकर्षण और सामर्थ्य को भी सूचित करता है। ब्रह्मचर्य-आश्रम उच्च योग्यता प्राप्त विद्यार्थी ही इन अग्नियों द्वारा प्रदत्त ऊँचे भौतिक-विज्ञान को ग्रहण कर सकते हैं। परम पद की प्राप्ति में भौतिक-विज्ञान का भी ''अभ्युदय'' के अन्तर्गत अपना स्थान और महत्त्व है। ''परम पद'' का विशेष विचार अगले लेख में किया जा रहा है।

गुरुकुल में प्रवेश

वैदिक विद्या केन्द्र गुरुकुलम् पुदुचेरी में प्राथमिक प्रवेश प्रारम्भ हो गये हैं। प्रवेश सीमित संख्या में लिए जाएंगे। गुरुकुल में प्रवेश के आवेदन के लिए विद्यार्थी का न्यूनतम पाँचवी कक्षा उर्त्तीण होना अनिवार्य है। इस गुरुकुल में परा-विद्या (आर्ष-विद्या) एवं अपरा-विद्या (आधुनिक-विद्या) का सुंदर समायोजन किया गया है। अपरा विद्या में चेन्नई में स्थित डीएवी शैक्षणिक संस्थानों का मार्गदर्शन गुरुकुल को प्राप्त है। इच्छुक माता-पिता या अभिभावक सभी विस्तृत जानकारी व प्रवेश हेतु गुरुकुल के वेबसाइट या *क्यूआर* कोड का सहयोग लेवें। तदुपरांत आप किसी भी प्रकार के प्रश्न या जिज्ञासा के लिए इस संदेश के अंत में दिये सम्पर्क सूत्रों पर संपर्क करें। गुरुककुल से सम्बन्धित जानकारी, प्रवेश फार्म व प्रवेश परीक्षा आदि विषयक जानकारियों निम्न लिंक पर जाकर आपको मिल जायेंगी।

सम्पर्क सूत्र- ६३७६६१०८४२, ९९५२९१५७१३

परोपकारिणी सभा, ऋषि मेला, वेदगोष्ठी २०२२

उपनिषद् वाङ्मय में ''ईश्वर प्राप्ति के साधन''

प्रस्तोता : स्वामी मुक्तानन्द

वेद मानव मात्र के लिए सर्वोपरि है। नि:सन्देह वेद समस्त विद्या गणित से लेकर युद्ध विद्या, ज्योतिष, वाणिज्य, नौ-विमान विद्या, प्राणी विज्ञान, उद्भिद् विज्ञान, व्यवहार विद्या, पदार्थ विज्ञान आदि से परिपूर्ण है, परन्तु इन सबसे अन्यतम है अध्यात्म विद्या। यहाँ तक कि महर्षि दयानन्द जी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में लिखते हैं-

''**सर्वेषां वेदानां मुख्यतात्पर्य ईश्वर एव अस्ति।**

अर्थात् ब्रह्मविद्या की प्राप्ति में वेदों का मुख्य प्रयोजन निहित है। वेदों का व्याख्यान ब्राह्मणग्रन्थ और ब्राह्मणग्रन्थों का आध्यात्मिक भाग उपनिषद् के रूप में सुप्रसिद्ध है जो ब्रह्मविद्या में ओतप्रोत हैं। उनमें एकादशोपनिषद् बहुल प्रचलित एवं प्रामाणिक रूप में स्वीकृत हैं। अध्यात्म का खजाना है उपनिषद्। उपनिषद् के बिना आध्यात्मिक उन्नति सहज नहीं है। वेदानुकूल मानव जीवन की चरम सफलता, आत्मोत्कर्ष की पराकाष्ठा को समझने के लिए उपनिषद् शास्त्र का अध्ययन अनिवार्य है, वैकल्पिक नहीं। विशाल ब्रह्माण्ड में सर्वबृहत् विराट् ब्रह्मतत्त्व के सुन्दर वर्णन, आत्मज्ञान एवं साधना सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण निर्देश से प्रत्येक उपनिषद् परिपूर्ण है। उपनिषद् के गम्भीर स्वाध्याय से एक जागरूक साधक अपने आप को झकझोर कर देखने में समर्थ होता है कि जीवन यात्रा में आध्यात्मिक मार्ग का पथिक मैं कितना अध्य (रास्ता) अतिक्रमण कर चुका हूँ? कितना शेष बचा है? किन परित्यज्य साधनों को अभी भी ढो रहा हूँ? किन ग्राह्य साधनों से सम्पन्न हूँ और किन साधनों से युक्त होना बाकी है?

प्रत्येक मनुष्य के अंत:स्थल में यह विचार उत्पन्न होता है कि मैं महान् बनूँ, श्रेष्ठ बनूँ, आदर्श बनूँ, आनन्द के उच्चतम शिखर को प्राप्त कर लूँ, परन्तु साधन के बिना साध्य लक्ष्य की पूर्ति या प्राप्ति नहीं होती है। समस्त दु:खों से छूटकर नित्य महान् आनन्द, ज्ञान, बल आदि की उपलब्धि जिस ईश्वर की प्राप्ति से सम्भव है उस के क्या उपाय हैं? आज हमारा विषय उपशीर्षक है- उपनिषद् वाङ्मय में बताए गए ''ईश्वर प्राप्ति के साधन।'' परावाक् वेदवाणी तो सभी विद्याओं का समाहार एवं मूल है, किन्तु उपनिषद् विद्या ब्रह्म अधिगम अर्थात् ईश्वर प्राप्ति के लिए ही उद्दिष्ट है। औपनिषद दर्शन आत्मविद्या पराविद्या योगविद्या की सर्वोच्च स्थिति का वर्णन करता है। कहा भी गया है-

द्वे विद्ये वेदितव्ये... परा चापरा च। तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति। अथ परा यया तद् अक्षरम् अधिगम्यते।। मुण्डकोपिषद् १-४,५

जिस विद्या से अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति होती है वह है परा विद्या वह है उपनिषद् विद्या।

साधारण जनमानस में एक प्रश्न उठेगा ब्रह्म अथवा ईश्वर तो एक अखण्ड सर्वव्यापक तत्त्व है, सर्वत्र विद्यमान है, सब जगह उपलब्ध है जो अप्राप्त नहीं उसे क्या प्राप्त करना है? दार्शनिक सम्प्रदाय में सुप्रसिद्ध है यहाँ ज्ञान की दूरी है, देश (स्थान) और काल की दूरी नहीं है तथा जीवात्मा अल्पज्ञ एवं अल्पशक्तिमान् होने से बिना साधन के कोई भी ज्ञान व प्रयत्न नहीं कर सकता है। यद्यपि आत्मा परमात्मा एक ही स्थान पर विद्यमान रहते हैं पुनरपि आत्मा मन से युक्त होकर वृत्ति सारूप्य होने से ब्रह्मज्ञान में असमर्थ होता है और जब चित के सर्व वृत्ति निरोध करता है तब ब्रह्म अधिगम ईश्वर का प्रत्यक्ष ज्ञान साक्षात्कार होता है, उसी को ईश्वर प्राप्ति कहते हैं वैसे ही असंप्रज्ञात समाधि में ईश्वर साक्षात्कार के साथ-

साथ प्रसंख्यान अग्नि से जब जीव के सारे क्लेश दग्धबीज अवस्था को प्राप्त करते हैं तब देहपात के बाद पुनर्जन्म नहीं होता है, मोक्ष पद को प्राप्त कर लेता है। यह ईश्वर प्राप्ति और मुक्ति प्राप्ति एक ही है, समाधि में ईश्वर साक्षात्कार करना मुक्ति से पूर्व अनिवार्य स्थिति है। असंप्रज्ञात समाधि में ईश्वर प्राप्ति के लिए जो साधन आवश्यक है वह मुक्ति प्राप्ति के लिए भी अनिवार्य साधन है।

साध्य की सिद्धि के लिए साधन अपरिहार्य कारण है जो साधनों से सम्पन्न है वही साध्य को सकता है। उपनिषद् वाङ्मय ब्रह्म अधिगम / मुक्ति/ ईश्वर प्राप्ति के साधन से परिपूर्ण है। ११ उपनिषदों प्रतिपादित साधनों को क्रमशः विचार करते हैं।

सर्वप्रथम ईशोपनिषद् जो यजुर्वेद के ४०वें अध्याय के प्रायः सदृश है। इस में बताया गया है-

''विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।।''

ईशोपनिषद् ११

विद्या अर्थात् तत्त्वज्ञान से अमृत-मुक्ति ईश्वर की प्राप्ति होती है। ईश्वर प्राप्ति में अनिवार्य साधन है परा विद्या, परा विद्या से ईश्वर साक्षात्कार बताया गया है। पूर्वोक्त मन्त्र में अविद्या=अपरा विद्या से मृत्यु को पार अर्थात् जीवित रहने का खाने-पीने जीने का साधन बताया गया है। कर्म से पुरुषार्थ से (धन भोग्य सामग्री उपार्जन से) और उपासना से=भोग्य पदार्थों के सेवन से मृत्यु से बच जाएंगे जैसे भूख लग रही है भोजन खाएंगे तो नहीं मरेंगे, प्राप्त भोजन की उपासना=सेवन करेंगे तो मरेंगे नहीं, यही मृत्यु को तर जाना और आत्मा शुद्ध अन्तःकरण से यथार्थ दर्शन विद्या से नाशरहित परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।

१५वें श्लोक में वैसे ही बताया।

हिरणमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत् त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।।

सत्यस्वरूप परमात्मा चमकीले आवरण से ढका हुआ है अर्थात् सर्वव्यापक परमात्मा कण-कण में विद्यमान है पुनरपि हम केवल बाह्य जगत् के रंग बिरगें पदार्थ को ही देख पाते हैं सत्यधर्म परमेश्वर का दर्शन ज्ञान प्राप्ति के लिए अन्तःकरण में विद्यमान अज्ञान रूपी आवरण को हटाना आवश्यक साधन है। संसार को सुखदायक मानना बड़ा अज्ञान है, इस अज्ञान रूपी पर्दा को हटाने से प्रभु परमात्मा का प्रत्यक्ष होता है। ईशोपनिषद् में इसके अतिरिक्त भी परोक्ष रूप में अनेक साधन बताए गए हैं।

ईश्वर प्राप्ति में एक बड़ा साधन है तत्परता। कोई भी मनुष्य अन्य उपलब्धियों के लिए जैसे धनवान् होना, बलवान् होना, विद्वान् बनना, समाज सुधार करना आदि कार्य के लिए कभी नहीं सोचता कि अगले जन्म में करूँगा किन्तु जब ईश्वर प्राप्ति, मोक्ष, आध्यात्मिक साधना की बात आती है तब बाद में या अगले जन्म के लिए सोचता है। केनोपनिषद् में बताया

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति
न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः।
भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः
प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति।।

केन २/५

''इस जन्म में प्राप्त नहीं किया तो महान् विनाश'' ऐसा अनुभव करना बहुत बड़ा साधन है। सभी जड़ या चेतन के अन्दर परमात्मा का अनुभव करना ईश्वर प्राप्ति में अनुपम साधन है। जब व्यक्ति सर्वत्र ब्रह्म की दिव्य उपस्थिति अनुभव करता है तो जीवन में आमूलचूल परिवर्तन होता है। पवित्र आचरण ही करता है। जैसे कोई कर्मचारी सेवक या सैनिक अपने अधिकारी के सम्मुख कोई अनुचित व्यवहार नहीं करता है।

यदि किसी मनुष्य को कोई पूछे तुम्हें एक चीज मिलेगी क्या चाहिए बताओ? हम अपने को भी पूछकर देख सकते हैं, किस वस्तु की प्राथमिकता बनी हुई है?

किस पर हमारी आशा टिकी हुई है? किसको सर्वाधिक उपयोगी मान रहे हैं हम? किस के सहारे पर हम महान् बनना चाहते हैं? परमात्मा को सर्वश्रेष्ठ मानते ही जीवन में दिव्यता परिपूर्ण हो जाती है। इस भाव को कठोपनिषद् में स्पष्ट शब्दों में कहा है-

एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम्।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते।। २-१७

परमात्मा की प्राप्ति के लिए आज हजारों संस्थाएं उपलब्ध हैं। सभी का कहना है कि हमारे मतानुसार ही ही परमात्मा की प्राप्ति होगी। कई तो कुछ महीने या ४० दिन या २१ दिन या ३ दिन में साक्षात्कार कराने का दम्भ भी करते हैं। आज इस सोशल मीडिया के युग में प्रत्येक दिन अनेकों चैनल्स में प्रवचन या क्रियात्मक योग लाइव चलते हैं, कुछ तो रिसॉर्ट में गोवा टूरिस्ट पैकेज के साथ योग सिखाते हैं। किन्तु यह परमात्मा न प्रवचन से मिलता है न मेधा बुद्धि से न बहुत सारा सुनने से मिलता है अपितु जिसका यह परमात्मा वरण करता है उसके लिए परमात्मा अपना स्वरूप प्रकाशित करता है। परमात्मा राग-द्वेष से सर्वथा रहित है अत: जो उसके मापदण्ड में योग्य है उसी को वरण करता है अन्यथा कितना ही प्रवचन में धुरन्धर हो, मेधावी हो, हजारों शास्त्र व प्रवचनों को सुना हुआ हो, उसको प्राप्त नहीं होगा।

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः
तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूँ स्वाम्।।

कठो. २/२३।। मुण्डक ३/३

फिर प्रश्न उठता है परमात्मा किसको वरण करता है? कौन योग्य है? जिसके अन्दर कोई सांसारिक कामना नहीं है वह व्यक्ति योग्य है। यदि मन या चित में सांसारिक सुख की कामना है, संसार के पदार्थ, पद-प्रतिष्ठा, धन, ऐश्वर्य, किसी व्यक्ति, किसी स्थान या स्थिति के प्रति राग अभिलाषा आकांक्षा है तो परमात्मा वरण नहीं करता है जैसे बच्चा खिलौने में खेलता है तो माँ गोद में नहीं लेती है जब बच्चा किसी भी खिलौने से नहीं खेलता, व्याकुल होता है तब माँ गोद में उठाती है। वैसे ही संसार के सभी वस्तु व्यक्ति, स्थिति से तृप्ति की आशा से रहित होता है तब ईश्वर अपना स्वरूप दर्शन कराते एवं अमृत होता है, ब्रह्म की प्राप्ति होती है। जैसे

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिताः।
अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते।।१४।।

कठ. २-३-१४/ बृह. ४-४-७

स्थूल दृष्टि अर्थात् मोटी बुद्धि वाले तो केवल इंद्रियगोचर पदार्थों को जानते हैं वैसे व्यक्ति परमात्मा-प्राप्ति में समर्थ नहीं होते, जो आगे से आगे देखने में विचारने समझने में समर्थ हैं वैसे सूक्ष्म बुद्धि वाले सूक्ष्मज्ञान रखने वाले ही परमात्मा की प्राप्ति में सफल होते हैं। अष्टाध्यायी व्याकरण के अनेक प्रयोजन में बुद्धि को सूक्ष्म करना भी एक प्रयोजन है। ऋषिकृत ग्रन्थों को गम्भीर शास्त्रों को पढ़ने-पढ़ाने से विचार करने से बुद्धि सूक्ष्म होती है यह अनिवार्य साधन है। कहा भी है-

एष सर्वेषु भूतेषु गूढोऽऽत्मा न प्रकाशते।
दृश्यते त्वग्रय्या बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः।।

कठ. १-३-१२

वैसे ही "**तमात्मस्थं ये अनुपश्यन्ति धीराः।** कठ. ५-१२,१३। परिपश्यन्ति धीरा:। ईश्वर प्राप्ति के लिये धीर-ज्ञानी विचारशील विवेकी विनीत बुद्धिमान् धैर्यवान् बनना ही पड़ेगा।

प्रश्नोपनिषद् में दक्षिणायन, उत्तरायण के वर्णन में ऋषि ने आदित्यप्रकाश ज्ञान परमात्मा की प्राप्ति के चार साधन बताएं हैं। **तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्यया** ये चार कहे गये हैं। यही बात अन्य उपनिषद् में तथा योगदर्शन में अभ्यास को दृढ़ करने के लिए **व्यास जी ने सत्कारासेवित में यही चार बातें बताईं हैं।** तप के बिना तो योग सिद्ध नहीं होता, ब्रह्मचर्य का इतना महत्त्व है मृत्यु को धकेलकर अमृत मोक्ष को प्राप्त कराने में

समर्थ है। श्रद्धा है तो व्यक्ति को प्रवेश मिल जाता है और सुरक्षित यात्रा साधना चलती है और विद्या तो लक्ष्य तक पहुँचा ही देती है, '**सा विद्या या विमुक्तये।**' इन चारों साधनों से साधक उत्तरायण मार्ग में मुक्ति की ओर यात्रा करता है।

अथोत्तरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्ययाऽऽत्मानमन्विष्यादित्यमभिजयन्ते। एतद्वै प्राणानामायतनमेतदमृतमभयमेतत् परायणमेतस्मान्न पुनरावर्तन्त इत्येष निरोधस्तदेष श्लोकः।।

प्रश्न १-१०।।

ऐसे ही मुण्डकोपनिषद् ईश्वरप्राप्ति के अनेकानेक साधनों से परिपूर्ण है। दुःखी होकर नहीं तप और श्रद्धापूर्वक जो अरण्य में अर्थात् भोग-विलास पूर्ण नागरिक जीवन से दूर एकान्त साधना प्रिय, शान्त उद्वेगों से रहित तथा साथ में विद्वान् भी है और निरभिमान होकर भिक्षाचरण करते हैं वे साधक लोग ज्ञानमार्ग से अव्ययात्मा परम पुरुष के अमृत लोक को प्राप्त करते हैं।

''**तपःश्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये**
शान्ता विद्वांसो भैक्ष्यचर्यां चरन्तः।
सूर्यद्वारेण ते विरजाः प्रयान्ति
यत्रामृतः स पुरुषो ह्यव्ययात्मा।।''

मुण्डक १-२-११

ईश्वर प्राप्ति के लिए अनुमान प्रमाण से परीक्षण करना आवश्यक है। जब व्यक्ति देखता है कर्म से जो भी प्राप्त होता है सब सुख क्षय हो जाता है टिकता नहीं है और नित्य सुख की आशा नहीं दिखती संसार में तब वैराग्य होता है। इस नित्य ब्रह्म की प्राप्ति के लिए गुरु के पास ही जाए। गुरु बिना ज्ञान नहीं, ज्ञान बिना ध्यान नहीं ध्यान बिना तूरीय पद की प्राप्ति नहीं होती है। लाखों में कोई एक अपवाद में पूर्व जन्म की प्रबल प्रतिभा से बिना गुरु के जन्मजाति संस्कार के आधार पर कुछ विवेक वैराग्य प्राप्त कर सकता है, नहीं तो सभी को गुरु के समीप जाना ही चाहिए। आजकल तो गुरुओं की कमी नहीं जगह-जगह गुरु बैठे हैं किंतु उपनिषद्कार ऋषि कहते हैं श्रोत्रिय वेदादिशास्त्र के विद्वान् गुरु तथा ब्रह्मनिष्ठ जो ब्रह्म की आराधना उपासना स्वयं करता है वैसे गुरु के पास जाए चाहे किसी को भी गुरु नहीं मानना चाहिए।

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन।
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।। मुण्डक १-२-१२

जो समस्त संसार का कर्त्ता-निर्माणकर्त्ता ईश्वर को ही देखता है अनुभव करता है स्वीकार करता है वही ईश्वर को प्राप्त करता है।

यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं
कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्।
तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय
निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति।।

मु. ३-१-३

स्पष्ट रूप से बताया कि ''सत्येन लभ्य'' जो मन वाणी आचरण से पूर्ण रूप से सत्य का पालन करता है वही परमात्मा की प्राप्ति कर सकता है। यहाँ भी तपः को साधन बताया। सम्यक् ज्ञान तत्त्वज्ञान अर्थात् विवेक ख्याति ईश्वर प्राप्ति में बहुत बड़ा साधन है आगे कहा '**क्षीणदोषाः यतयः पश्यन्ति**', जिनके दोष अर्थात् राग-द्वेष-मोह क्षीण हो गए हैं ऐसे यति संन्यासी देखते हैं,साक्षात्कार करते हैं। अन्तःकरण की निर्मलता अत्यावश्यक है।

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा
सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।
अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो
यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः।।

मु. ३-१-५

वहीं बताया '**सत्यमेव जयति नानृतम्**'

ईश्वर प्राप्ति का साधन है समाधि और समाधि ध्यान का ही उत्कृष्ट रूप है। जैसे ध्यान करने से ईश्वर

प्राप्ति होती है उस की विधि धनुष-तीर के उदाहरण द्वारा मुण्डक उपनिषद् में बताई गई है। प्रणव अर्थात् ओंकार को धनुष बनाएं, साधक मुमुक्षु अपने आत्मा को तीर बनाएं और ब्रह्म को लक्ष्य बनाए, बिना प्रमाद अर्थात् पूर्ण जागरूकता एकाग्रता के साथ बाँधना चाहिए जैसे तीर लक्ष्य को प्राप्त करके वहीं स्थिर हो जाता है वैसे ही आत्मा तन्मय हो जाए वहीं ब्रह्म की अनुभूति करे, अग्नि को प्राप्त लोहा भी अग्निमय हो जाता है तत्सदृश अनुभव में ओत-प्रोत होना प्रमुख साधन है।

प्रणवो धनुः शारो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत् तन्मयो भवेत्।।

मु. २-२-४

आगे भी श्लोकों में ऐसा ही वर्णन मिलता है उस एक ब्रह्म को ही जानें अन्य सभी बातें छोड़ दें अर्थात् बाकी सभी कार्य गौण करें ब्रह्म प्राप्ति ब्रह्मज्ञान को मुख्य रखें। उसके लिए अधिक समय शक्ति लगाएं।

''**यस्मिन् द्यौः पृथिवी चान्तरिक्षमोतं मनः सह प्राणैश्च सर्वैः। तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथामृतस्यैष सेतुः।।**'' मु. २-२-५

वही भवसागर दुःखसागर से पार होने के लिए अमृतत्त्व का वह सेतु है। हृदय के अन्दर विचरण करने वा प्रकट होने वाले परमात्मा का ओंकार के रूप में ध्यान करो वही तुम्हारे लिए कल्याणकारक है।

ओमित्येवं ध्यायथ आत्मानं स्वस्ति वः पाराय तमसः परस्तात्।। मु. २-२-६।।

जैसे हमारे आगे-पीछे, दाएं-बाएं कोई व्यक्ति है तो हम अनुभव करते हैं उससे प्रभाव पड़ता है वैसे ब्रह्म ही अमृतस्वरूप है, मेरे सामने ब्रह्म पीछे ब्रह्म दाएं ब्रह्म बाएं ब्रह्म नीचे ब्रह्म ऊपर ब्रह्म सर्वत्र ब्रह्म फैला हुआ है अपने अंग संग अनुभव कर आध्यात्मिक उन्नति में महान् उपाय है, ईश्वर प्राप्ति में विशेष साधन है।

''**ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्ताद् ब्रह्म पश्चाद् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण। अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्।।**'' मु. २-२-११

किन साधनों से युक्त व्यक्ति मुक्ति, ईश्वर प्राप्ति में समर्थ होता है? बताते हुए कहा गया है कि

''**वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद् यतयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे।।**'' मु. ३-२-६

अर्थात् जो वेदान्त=वेद के सिद्धान्त रूप विशेष ज्ञान से आत्मप्रयोजन को निश्चित कर चुके हैं, समस्त एषणाओं को छोड़कर संन्यास धर्म से युक्त यति संन्यासी शुद्ध अन्तःकरण वाले योगी हैं वे सभी दुःखों से छूटकर उत्कृष्ट अमरत्व को प्राप्त कर लेते हैं।

मुण्डकोपनिषद् की समाप्ति में ऋषि ब्रह्मविद्या के अधिकारी बताते हुए ईश्वर प्राप्ति के साधनों का उपसंहार करते हैं। क्रियावन्तः क्रियाशील अर्थात् सक्रिय पुरुषार्थी जो निकम्मा, आलसी, सुस्त नहीं, कर्मठ है वही अधिकारी है। कोई बहुत परिश्रमी है किन्तु स्वेच्छा से मिथ्यज्ञान से खूब श्रम करता है तो नहीं होगा इसलिए आगे कहा श्रोत्रिय वेद शास्त्र का अध्ययन करने वाला ही ईश्वर प्राप्ति में समर्थ है जो वेद को नहीं मानता है, जो वेद को छोड़कर अन्यत्र वेद विरुद्ध में खूब पुरुषार्थ करता वह शूद्रत्व को प्राप्त होता है, ब्रह्मविद्या का अधिकारी नहीं होता है। कोई अध्ययन खूब करता है किन्तु ब्रह्म में निष्ठा नहीं तो भी साधन नहीं, ब्रह्म में अनन्य भक्ति अर्थात् ब्रह्म को सर्वोपरि माने, उससे अधिक प्रिय किसी जड़ चेतन को ना माने, ब्रह्म ही सर्वाधिक हितैषी, ब्रह्म ही चाहिए और कुछ नहीं ऐसे स्थिति को नितरां तिष्ठति निष्ठ कहते हैं। ब्रह्मनिष्ठता ईश्वर प्राप्ति में अद्वितीय साधन है। इसके लिए किसी एक ऋषि ब्रह्मज्ञानी को स्वयं श्रद्धापूर्वक स्वीकार करना आवश्यक है, दूसरों के कथन प्रेरणा विज्ञापनमात्र से नहीं। इन सब के बाद जो शास्त्रोक्त विधि से दूसरों के सहारे नहीं अपने शिर में अर्थात् मुख्य व्रत के रूप से चयन किया वह ब्रह्मविद्या का अधिकारी है, इन साधनों से ईश्वर प्राप्ति होती है

"**तदेतदृचाऽभ्युक्तम्। क्रियावन्तः श्रोत्रिया ब्रह्मनिष्ठाः स्वयं जुह्वत एकर्षिं श्रद्धयन्तः। तेषामेवैतां ब्रह्मविद्यां वदेत शिरोव्रतं विधिवद् यैस्तु चीर्णम्।।**" ३-२-१० माण्डुक्योपनिषद् में आलंकारिकरूप में ब्रह्म की जाग्रत अवस्था सृष्टि काल=व्यक्त जगत् को बताया, स्वप्न अवस्था निर्माण अभिमुख जगत् मानो घनघोर प्रलय की समाप्ति के बाद ब्रह्म, आगे बनने वाले जगत् का स्वप्न देख रहा है कल्पना (कृपु सामर्थ्य), धीरे-धीरे निर्माण कर रहा है जैसे गृह निर्माता/ आर्किटेक्ट भवन बनाने से पहले मन ही मन अवलोकन विचार करते हैं। इनका यह स्वप्न तब तक चलता है जब तक भवन पूरा बनकर तैयार हो जाए। भवन बनने के बाद स्वप्न कल्पना विचार समाप्त तथा प्रत्यक्ष स्थिति जाग्रत अवस्था आ जाती है। ब्रह्म की सुषुप्ति अवस्था प्रलयकाल है, ब्रह्म शयन नहीं करता है फिर समझाने के लिए सृष्टि संचालन ना होने से मानो सो गया है। इन तीनों अवस्था से भिन्न मात्रा से रहित ब्रह्म की चौथी अवस्था है जो व्यवहार उपयोगी नहीं है सब प्रपंच=फैलाव तामझाम क्रिया कार्य से रहित शिव कल्याण स्वरूप है उसके समान कोई द्वितीय नहीं उस ओंकार ब्रह्म के इस चतुर्थ शुद्ध स्वरूप को जो ऐसे जानता है वही जीवात्मा अपनी आत्मा के द्वारा परमात्मा में प्रवेश कर जाता है। जगत् निर्माण पालन प्रलय से भिन्न ब्रह्म का निर्गुण निराकार निज स्वरूप जानना ब्रह्म प्राप्ति में साधन है।

अमात्रचतुर्थोऽव्यवहार्यः प्रपञ्चोपशमः
शिवोऽद्वैत एवमोङ्कार आत्मैव
संविशत्यात्मनाऽऽत्मानं य एवं वेद।। १२।।

माण्डुक्योपनिषद्

तैत्तिरीय उपनिषद्कार कहते हैं कोई कहता कि ब्रह्म नहीं है तो ब्रह्म का अभाव नहीं होता कहने वाले का ही अस्तित्व मिटता है और जो कहता है ब्रह्म है फिर ब्रह्म के अस्तित्व से उसका अस्तित्व सिद्ध हो जाता है।

"**असन्नेव स भवति। असद्ब्रह्मेति वेद चेत्।**
अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेद।
सन्तमेनं ततो विदुरिति। तस्यैष एव शारीर
आत्मा। यः पूर्वस्य।।"

तैत्तिरीय २-६-९

ब्रह्म आनंद रस से परिपूर्ण है, उस रस को प्राप्त करके ही जीव आनन्दवाला होता है। कौन जी सकता है कौन श्वास ले सकता है यदि आकाश में आनन्द स्वरूप ब्रह्म नहीं होता, मेरा जीवन एवं यह जगत् ब्रह्म के बिना एक क्षण भी टिक नहीं सकते। जीवन का क्षण-क्षण ब्रह्माण्ड का कण-कण इस ब्रह्म के कारण ही अस्तित्व में है यह प्रतीति ईश्वर प्राप्ति में महान् साधन है।

"**यद्वै तत् सुकृतम्। रसो वै सः। रस ह्येवायं**
लब्ध्याऽऽनन्दी भवति। को योवान्यात्कः प्राण्यात्।
यदेष आकाश आनन्दो न स्यात्। एष
ह्येवाऽऽनन्दयाति तैत्तिरीय २-७-२

इस उपनिषद् के प्रसिद्ध उपदेश स्वाध्याय प्रवचन में कभी लापरवाही अवहेलना न करो ये दो कार्य चलेंगे। तो धीरे-धीरे ईश्वर प्राप्ति तक पहुंच जाओगे।

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।।

तै. १-११-१

ऐतरेय उपनिषद् में बताया "प्रज्ञानं ब्रह्म" ३-३, जो सर्वोत्कृष्ट ज्ञान वाला है वह ब्रह्म है, ब्रह्म ज्ञान स्वरूप है उसमें सभी प्रतिष्ठित हैं उपासक इस प्रज्ञ आत्मा की उपासना से इस लोक से ऊपर उठकर अमृत स्वरूप सुखद लोक को प्राप्त कर लेता है।

अरणि मन्थन से अग्नि देव प्रकट होते हैं। नीचे एक काष्ठ रहता है उसके ऊपर एक काष्ठ खड़ा रहता है जिसको रस्सी के द्वारा घुमाया जाता है जैसे दधि मन्थन करते हैं। इस प्रकार अपने शरीर को नीचे का अरणि बना कर और प्रणव ओंकार को ऊपर के अरणि तुल्य ध्यान रूपी मन्थन से निगूढ़ छुपे हुए ईश्वर का प्रत्यक्ष प्राप्ति होती है। स्वस्थ शरीर एवं प्रणव जप को ईश्वर प्राप्ति

का साधन बताया गया है।

स्वदेहमरणिं कृत्वा प्रणवं चोत्तरारणिम्।
ध्याननिर्मथनाभ्यासाद्देवं पश्यन्निगूढवत्।।

श्वेताश्वतर. १-१४

योगाभ्यास के क्रियात्मक स्वरूप आसन की दृढ़ता एवं उन्नत स्थिति छाती उभरी हुई गर्दन सीधी सिर ऊँचा रखना आवश्यक है जैसे तैराक रखते हैं, शरीर सीधा सरल रहे मन के साथ इन्द्रियों को स्थिर करने (प्रत्याहार) के बाद ब्रह्म= ओंकार रूपी नौका से भयावह दु:ख बाधा विघ्न से परिपूर्ण भवसागर को तर जाएं।

प्राणों को बलपूर्वक रोककर शारीरिक आहार-विहार चेष्टाओं को सम्यक् रूप से करने वाला जैसे दुष्ट घोड़ों को वश में किया जाता है वैसे विद्वान् अपने मन को रोके। आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि यह सब ईश्वर प्राप्ति के साधन हैं जिसका वर्णन श्वेताश्वतर उपनिषद् में मिलता है।

श्वे. २-८, २-९, ६-१३

सांख्यविद्या अर्थात् जड़ चेतन का पृथक्-पृथक् विवेक एवं योगविद्या अर्थात् अभ्यास वैराग्य द्वारा चित्तवृत्ति निरोध करने से ईश्वर की प्राप्ति होती है।

नित्यो नित्यानां चेतनश्वेतनानामेको बहूनां यो विदधाति कामान्। तत्कारणं सांख्ययोगाधिगम्यं ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः।। श्वे. ६-१३

अंत में कहा देवाधिदेव परमदेव में जिसकी सर्वोत्कृष्ट भक्ति प्रीति है तथा जैसे देव में भक्ति वैसी गुरु में भी भक्ति है उसी महानात्मा के लिए शास्त्र कथित फल प्रकाशित होते हैं।

यस्य देवे परा भक्तिः यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।

श्वेता. ६-२३

अपवाद में पूर्व जन्म से प्राप्त योग्यता के आधार पर कोई बिना गुरु के ईश्वर प्राप्ति समाधि की प्राप्ति कर सकता है अन्यथा सद्गुरु ईश्वर प्राप्ति में एक अद्वितीय साधन है, गुरु ही परम गुरु से मिलाने का माध्यम है। श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ या तत्कल्प गुरु के वचन पर पूर्व विश्वास कर अनुष्ठान करने से थोड़े काल में बहुत अधिक आध्यात्मिक उन्नति होती है जो प्रत्यक्ष भी देखी जातीं है।

छान्दोग्योपनिषद् में बताया ब्रह्मचर्य आश्रम में आचार्य कुल में निवास करते हुए समस्त इच्छाओं को छोड़कर ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना धर्म है, गृहस्थ आश्रम में यज्ञ, अध्ययन, दान करना धर्म है और वानप्रस्थ आश्रम में तप करना धर्म है फिर कहा ये सभी धर्म पुण्यलोक को प्राप्त कराते हैं और चतुर्थ संन्यास आश्रम में धर्म न कहकर ब्रह्म में स्थित होना बताया और ब्रह्मसंस्थ ब्रह्म में डूबे रहना ओतप्रोत अनुभव करना अमृतत्व मुक्ति ईश्वर प्राप्ति का साधन बताया है।

त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति प्रथमस्तप द्वितीयो ब्रह्मचार्याचार्यकुलवासी तृतीयोऽत्यन्तमात्मानमाचार्यकुलेऽवसादयन्सर्व एते पुण्यलोका भवन्ति ब्रह्मसंस्थोऽमृतत्वमेति।।

२.२३.१ छान्दोग्य उपनिषद्

ईश्वर प्राप्ति के साधनों के क्रम में नारद-सनत् कुमार प्रसंग (छान्दोग्य सप्तम प्रपाठक १-२६ खण्ड) में रोचक वर्णन आता है। नारद जी ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद आदि १८ विद्याएं पढ़ चुके थे फिर भी आत्मा परमात्मा की प्राप्ति साक्षात्कार से वंचित थे ऋषि सनत् कुमार जी ने कहा यह सब तो शब्द मात्र नाम को ही आपने जाना। नाम की जितनी क्षमता है उतनी ही तो प्राप्ति होगी सम्पूर्ण दु:ख से छूटना मुक्ति ईश्वर प्राप्ति इससे सम्भव नहीं है। क्रमश: पुन: ईश्वर प्राप्ति के साधनों में एक से आगे एक बताते गए नाम वाणी मन- संकल्प चित् ध्यान विज्ञान बल अन्न जल तेज आकाश स्मृति आशा प्राण सत्य ज्ञान मनन से विज्ञान-मति-श्रद्धा निष्ठा कर्मण्यता सुख और अंत में बताया जो भूमा है यही सुख है अल्प में सुख नहीं। भूमा को जानने की इच्छा करो। इनमें एक के बाद उसके आगे का आगे जो जानना प्राप्त करना चाहता है

वही ईश्वर प्राप्ति में समर्थ होता है जो कहीं रुक गया वह नहीं पहुँच पाता है।

बृहदारण्यकोपनिषद् में मैत्रेयी याज्ञवल्क्य कथोपकथन में आया पति के लिए पति प्रिय नहीं होता है आत्मा को तो सुख प्रिय होता है पति से सुख की कामना होने से पति प्रिय होता है वैसे ही पत्नी, पुत्र, धन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, लोक, देव, भूत, सब संसार कोई भी अपने आप प्रिय नहीं होता है आत्मा के स्वार्थ के लिए सब प्रिय होते हैं। अत: आत्मा ही निश्चित रूप से साक्षात्कार करने योग्य है, आत्मा के बारे में सुनना चाहिए, विचार करना चाहिए, निदिध्यासन करना चाहिए। यहाँ श्रवण मनन निदिध्यासन साक्षात्कार विधि को साधन के रूप में प्रस्तुत किया जिसे आगम स्वाध्याय प्रवचन व्यवहार काल के रूप में भी जानते हैं। यही ईश्वर प्राप्ति के साधन हैं।

न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वं प्रियं भवति आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो। मैत्रेयि आत्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्त्वा विज्ञानेनेदं सर्वं विदितम्।। बृहद्. २-४-५

सब इन्द्रियों के विषय मन के विषय वाणी के विषय जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति को यह आत्मा नहीं यह आत्मा नहीं, इस प्रकार वर्णन करने से जो शेष रह जाता है वह है ईश्वर जो अग्राह्य अन्य ग्राह्यों का वर्णन ही अग्राह्य की प्राप्ति में साधन है।

स एष नेति नेत्यात्मागृह्यो न हि गृह्यते...।।

बृहद्. ४-२-४

पूर्वकाल में विद्वान् लोग प्रजा की कामना नहीं करते थे। पुत्रैषणा, वितैषणा, लोकैषणा से ऊपर उठकर भिक्षाचरण करते थे। एषणाओं से मुक्त होना, सभी एषणाओं को छोड़ देना ईश्वर प्राप्ति में अनिवार्य साधन है।

एतद्ध स्म वै तत्पूर्वे विद्वांसः प्रजां न कामयन्ते किं प्रजया करिष्यामो येषां नोऽयमात्माऽयं लोक इति। ते ह स्म पुत्रैषणायाश्च वित्तैषणायाश्च लोकैषणायाश्च व्युत्थायाथ भिक्षाचर्यं चरन्ति या ह्येव पुत्रैषणा सा वितैषणा सा लोकैषणोभे ह्येते एषणे एव भवतः। स एष नेति नेत्यात्माऽगृह्यो न हि गृह्यते। बृह. ४-४-२२

आत्मा को द्रष्टव्य कहना विवेक है, एषणाओं त्याग वैराग्य है। इसके बाद षट्क सम्पत्ति की साधनता प्रस्तुत है। आत्मा नित्य है, उसकी महिमा कर्म से न बढ़ती है न घटती है ऐसा जानकर शान्त अर्थात् अंत:करण का शमन, दान्त मन इन्द्रियों को अधर्म से रोकना, उपरत बुरे आचरण से हटना, तितिक्षु धर्म/ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में आने वाली बाधाओं को सहन करना, समाहित एकाग्र समाधान युक्त होना बेचैन चंचलता को समाप्त कर देना, पाप व मलरहित संशय से निवृत्त होकर श्रद्धा युक्त ब्रह्मज्ञानी हो जाता है। ईश्वर प्राप्ति मुक्ति के लिए यह षट्क सम्पत्ति अन्यतम साधन है।

तदेतदृचाभ्युक्तम्। एष नित्यों महिमा ब्राह्मणस्य न वर्धते कर्मणा नो कनीयान्। तस्यैव स्यात् पदवितं विदित्वा न लिप्यते कर्मणा पापकेनेति। तस्मा देवंविच्छान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षुः समाहितो भूत्वाऽऽत्मन्येवाऽऽत्मानं पश्यति सर्वमात्मानं पश्यति नैनं पाप्मा तरति सर्वं पाप्मानं तरति नैनं पाप्मा तपाति सर्व पाप्मानं तपति विपापो विरजोऽविचिकित्सो ब्राह्मणो भवति एष ब्रह्मलोकः सम्राड् एनं प्रपितोऽसि इति होवाच याज्ञवल्क्यः। सोऽहं भगवते विदेहान्ददामि मां चापि सह दास्यायेति।। २३।।

बृहद्. ४-४-२३

मुमुक्षुत्व के बारे में पहले बता चुके हैं। इन साधनों का बहुतायत वर्णन उपनिषदों में उपलब्ध होता है।

विवेक, वैराग्य, षट्क सम्पत्ति एवं मुमुक्षुत्व इन चारों साधनों से युक्त साधक मुक्ति ईश्वर प्राप्ति के अधिकारी बन जाता है।

वानप्रस्थ साधक आश्रम, रोजड़, गुजरात

दम्पती शिविर

दिनांक २४ अगस्त (गुरुवार) से २७ अगस्त (रविवार) २०२३ तक

स्थान - पुष्कर मार्ग, ऋषि उद्यान, अजमेर

दम्पती अर्थात् पति-पत्नी गृहस्थ के आधार होते हैं। पति-पत्नी का परस्पर प्रिय सम्बन्ध पूरे गृहस्थ आश्रम व समीपस्थ परिजनों-मित्रों को सुप्रभावित करता है। पति-पत्नी की परस्पर प्रियता-अप्रियता की न्यूनाधिकता उनके परस्पर व्यवहार की कुशलता-अकुशलता पर निर्भर करती है। दोनों का सुख-दु:ख इसी पर आश्रित है।

परस्पर प्रियता-सुख-शान्ति का जो स्तर पति-पत्नी चाहते हैं, वह प्रयत्न-पुरुषार्थ के अनुसार न्यूनाधिक रहता है। न्यूनता को हटाने के लिए उपायों की जिज्ञासा बनी रहती है। यदि आप में ऐसी जिज्ञासा है तो यह शिविर आपके लिए उपयोगी है।

आप इस शिविर में जहाँ दाम्पत्य जीवन की वैदिक दृष्टि से अवगत होंगे, वहाँ आपके दाम्पत्य जीवन की समस्याओं का आध्यात्मिक-व्यावहारिक समाधान भी मिल सकेगा। पति-पत्नी के परस्पर सम्बन्धों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण आपसी सम्बन्ध को बढ़ाने में सहायक होगा। आइये एक प्रयास इस दिशा में भी करके गृहस्थ को स्वर्गाश्रम की ओर ले चलें।

शिविर के प्रशिक्षक हैं- मुनि सत्यजित् एवं मुनि ऋतमा।

इस आवासीय शिविर हेतु **२३ अगस्त को सायं ४ बजे तक पहुँच जाना है।** शिविर की समाप्ति २७ अगस्त को अपराह्न ४ बजे तक होगी। आप अनुकूलता से एक दिन आगे-पीछे २३ अगस्त को आ सकते हैं व २८ को प्रस्थान कर सकते हैं। संख्या सीमित रहेगी। अपना आवेदन देकर स्वीकृति मिलने पर शिविर शुल्क जमा करा देवें। आवेदन का अन्तिम दिन १५ अगस्त है। **शिविर शुल्क १०००/-प्रति व्यक्ति है। निवास शुल्क :** सामूहिक-नि:शुल्क, पृथक् कक्ष- १०००/- (पंखा), २०००/- (कूलर), ३०००/- (ए.सी.) अतिरिक्त रहेगा। असमर्थ किन्तु योग्य दम्पती को शिविर शुल्क में छूट दी जा सकती है। शिविर में पति-पत्नी दोनों का आना आवश्यक है, बच्चों को साथ नहीं लाया जा सकता है। मोबाईल आदि सम्पर्क-उपकरणों का प्रयोग निषिद्ध रहेगा, इन्हें कार्यालय में जमा करा देना है।

सम्पर्क - वाट्सएप्प- ९३१४३९४४२१ (नन्दकिशोर जी) ई-मेल- psabhaa@gmail.com

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय का पुन: आरम्भ २६ अगस्त को किया गया है। यह चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें। **- मन्त्री**

।। ओ३म् ।।

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में

१४० वाँ ऋषि बलिदान समारोह

कार्तिक शुक्ल चतुर्थी से षष्ठी, संवत् २०८० तदनुसार

दिनांक १७, १८, १९ नवम्बर २०२३, शुक्र, शनि, रविवार

विराट् व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण के प्रति कृतज्ञता को प्रकट करने का स्वर्णिम-अवसर ऋषि के १४०वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको पुनः प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है। मुख्य कार्यक्रमों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :-

अथर्ववेद पारायण यज्ञ- 'अथर्ववेद पारायण यज्ञ' का आरम्भ मंगलवार १४ नवम्बर से होगा व इसकी पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन १९ नवम्बर को प्रातः १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् होंगे।

ध्वजारोहण व उद्घाटन- बलिदान समारोह का विधिवत् उद्घाटन ओ३म् ध्वजा के आरोहण व प्रधान जी के उद्‌बोधन के साथ किया जायेगा।

उपदेश-प्रवचन-भजन- प्रातः यज्ञ के बाद आध्यात्मिक प्रवचन होंगे। पूर्वाह्न, अपराह्न व रात्रि में आयोजित विभिन्न प्रासंगिक विषयों वाले सत्रों में आर्यजगत् के विशिष्ट संन्यासियों, विद्वानों, आचार्यों के विचार सुनने को मिलेंगे। साथ ही भजनोपदेशकों के मधुर भजनों का आनन्द भी प्राप्त होगा।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी वेदगोष्ठी साथ में होगी। परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान स्व. श्री गजानन्द आर्य की स्मृति में परोपकारिणी सभा, अजमेर व महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर एवं अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली के संयुक्त तत्त्वावधान में वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **महर्षि दयानन्द का समाजिक चिन्तन व वेद।** जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे ३१ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। १७, १८, १९ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

वानप्रस्थ एवं संन्यास दीक्षा- इस अवसर पर शुक्र-शनि दिनाङ्क १७ व १८ को दिन में क्रमशः वानप्रस्थ व संन्यास संस्कार भी कराया जायेगा। वानप्रस्थ व संन्यास दीक्षा लेने के इच्छुक व्यक्ति ३१ अक्टूबर तक अपना परिचय आदि जीवनवृत्त परोपकारिणी सभा को भिजवा देवें। उन पर विचार के बाद इसके योग्य व्यक्तियों को वानप्रस्थ या संन्यास दीक्षा देने का निश्चय किया जायेगा।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी एक वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। १८ नवम्बर को परीक्षा एवं १९ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय ३१ अक्टूबर, २०२३ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान-समारोह होगा। जिसमें १७ विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा। इनके विशेष योगदान को बताते हुए इनका परिचय भी दिया जायेगा।

आर्यवीर दल व्यायाम प्रदर्शन- इस समारोह में शनिवार दिनाङ्क १८ को सायंकाल आर्यवीरों व ब्रह्मचारियों द्वारा व्यायाम-आसन आदि का भव्य प्रदर्शन किया जायेगा।

आर्यसाहित्य व यज्ञादि उपकरणों का विक्रय- इस अवसर पर परोपकारिणी सभा के अतिरिक्त भी अनेक पुस्तक प्रकाशकों-विक्रेताओं की पुस्तकें, यज्ञ-पात्र-ध्वजा आदि, आयुर्वेदिक औषधियों की दुकानें लगेंगी। इनके क्रय का अवसर प्राप्त होगा।

ऋषि लंगर- बलिदान समारोह में पधारे सभी श्रद्धालुओं के लिए ऋषि उद्यान में परोपकारिणी सभा द्वारा पौष्टिक, स्वादिष्ट प्रातराश एवं दो समय के भोजन की व्यवस्था की गई है।

नवम्बर के आरम्भ में अजमेर में हल्की ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १३९वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आर्यजगत् के अनेक प्रसिद्ध संन्यासी, मुनि, विद्वान्, आचार्य, भजनोपदेशक आदि पधार रहे हैं।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

www.paropkarinisabha.com email : psabhaa@gmail.com

सत्यानन्द आर्य — **प्रधान**

मुनि सत्यजित् — **मन्त्री**

गुरुकुल प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषिउद्यान, अजमेर में संस्कृत भाषा, पाणिनीय व्याकरण, वैदिक दर्शन, उपनिषदादि के अध्ययन हेतु प्रवेश आरम्भ किये गए हैं। इन्हें पढ़कर वैदिक विद्वान्, उपदेशक, प्रचारक बन सकते हैं। कम से कम दसवीं कक्षा उत्तीर्ण १६ वर्ष से बड़े युवकों को प्रवेश मिल सकता है। प्रवेशार्थी को पहले ३ माह का अस्थाई प्रवेश दिया जाएगा। इस काल में अध्ययन व अनुशासन में सन्तोषजनक स्थिति वाले युवकों को ही स्थाई प्रवेश दिया जाएगा। सम्पूर्ण व्यवस्था निःशुल्क है। गुरुकुल में अध्ययन के काल में किसी भी बाहर की परीक्षा को नहीं दिलवाया जाएगा, न उसकी अनुमति रहेगी। प्रवेश व अधिक जानकारी के लिए-

चलभाष : ७०१४४४७०४० पर सम्पर्क कर सकते हैं। सम्पर्क समय- अपराह्न ३.३० से ४.३०।

वेदगोष्ठी-२०२३

(कार्त्तिक शुक्ल चतुर्थी से षष्ठी, संवत् २०८० तदनुसार १७, १८ एवं १९ नवम्बर, २०२३)

मान्यवर, सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध-पत्र **परोपकारी** व वेदपीठ की शोध-पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते हैं, वे भी इनसे लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। कोविड् के २ वर्षों को छोड़ गत ३५ वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। इस बार वेदगोष्ठी के लिए निर्धारित विषय है:-

महर्षि दयानन्द का सामाजिक चिन्तन व वेद

उपशीर्षक :

०१. समाज की अवधारणा
०२. वैदिक समाज का स्वरूप
०३. समाज की आवश्यकता/अपरिहार्यता
०४. समाज का आरम्भ व विकास
०५. सामाजिक उन्नति का तात्पर्य
०६. जाति प्रथा व वर्ण
०७. समाज की वैदिकता
०८. अन्तर्जातीय सम्बन्ध व वर्ण संकरता
०९. विभिन्न आधुनिक व्यवसायों का भिन्न-भिन्न वर्णों में समावेश का निर्णय
१०. दलितों के प्रति समाज का कर्त्तव्य
११. महिलाओं के प्रति समाज के विशेष कर्त्तव्य, नियम-व्यवस्था
१२. विभिन्न वर्ण व आश्रम के व्यक्तियों के समान-असमान वर्ण व आश्रम के व्यक्तियों से व्यवहार की वेदानुकूल रीति।

इस विषय में महर्षि दयानन्द द्वारा जो प्रतिपादित किया गया है, उसके प्रमाणों का संग्रह और सिद्धान्तों की पुष्टि हो, यह इस गोष्ठी का उद्देश्य है। इसी आधार पर विषय का वर्गीकरण भी किया गया है। आप अपने विस्तृत अध्ययन के आधार पर इस विषय को प्रमाणों से पुष्ट करेंगे, ऐसा विश्वास है।

आप विद्वान् हैं। अतः आपसे निवेदन है कि गोष्ठी हेतु अपने विचार प्रेषित करें। आप कौन से उपविषयों पर प्रकाश डालने की इच्छा रखते हैं इसकी सूचना लौटती डाक से भेजने की कृपा करें। प्राप्त उत्कृष्ट लेख परोपकारी पत्रिका व पुस्तकाकार में प्रकाशित किए जाते हैं। प्रायः गोष्ठियों के लेख प्रकाशित हो चुके हैं। आप जिस विषय पर लिखना चाहें उसकी सूचना गोष्ठी के संयोजक को देने की कृपा करें। पिष्टपेषण न हो तथा विषय का सर्वांगीण विवेचन हो सके इसके लिए ऐसा करना आवश्यक है। लेख टाइप किए गए १० पृष्ठ से अधिक न हो। लेख में प्रस्तुत विचारों एवं तथ्यों के लिए महर्षि कृत ग्रन्थ व भाष्यों के प्रमाण अवश्य उद्धृत करें, प्रमाणों का पूरा पता दें। निबन्धों में आये सन्दर्भ ग्रन्थ एवं अन्य सामग्री की सूची शोध की स्पष्टता के लिए आवश्यक है। यदि आपके पास कम्प्यूटर की व्यवस्था है, तो अपना लेख, खुला (open file) हुआ ई-मेल से भेजें। पत्र/निबन्ध की भाषा हिन्दी या संस्कृत हो सकती है। लेख स्पष्ट रूप से कागज के एक ओर टाइप किया अथवा सुपाठ्य रूप में लिखा

होना चाहिए। वेद गोष्ठी में पढ़े गये सर्वश्रेष्ठ तीन शोध पत्र प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कृत किये जायेंगे। निर्णायकों का निर्णय अन्तिम व सर्वमान्य होगा।

आपका सहयोग ही गोष्ठी की सफलता का आधार है। आपके सुझाव एवं मार्गदर्शन की प्रतीक्षा रहेगी। आप यदि किसी कारण से लेख लिखने में असमर्थ हों तो भी सूचित करने का कष्ट करें।

गोष्ठी में शोधपत्र प्रस्तुत करने के इच्छुक विद्वान्/शोधार्थी कृपया दिनांक ३१-१०-२०२२ तक अपने शोधपत्र (सार-संक्षेप सहित) आचार्य शक्तिनन्दन-९४९०४९२४९४ संयोजक, वेदगोष्ठी, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर को प्रेषित कर दें।

सादर।

उत्तराकांक्षी

मुनि सत्यजित्

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर।

पिछली वेद गोष्ठियों में अब तक निम्नलिखित विषयों पर विचार किया जा चुका है

०१. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	१९८८
०२. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग।	१९८९
०३. अथर्ववेद समस्या और समाधान।	१९९०
०४. वेद और विदेशी विद्वान्।	१९९१
०५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप।	१९९२
०६. वेदों के दार्शनिक विचार।	१९९३
०७. सोम का वैदिक स्वरूप।	१९९४
०८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान।	१९९५
०९. वैदिक समाज व्यवस्था।	१९९६
१०. वेद और राष्ट्र।	१९९७
११. वेद और विज्ञान।	१९९८
१२. वेद और ज्योतिष।	१९९९
१३. वेद और पदार्थ विज्ञान	२०००
१४. वेद और निरुक्त	२००१
१५. वेद में इतिहास नहीं	२००२
१६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	२००३
१७. वेद में शिल्प	२००४
१८. वेदों में अध्यात्म	२००५
१९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन	२००६
२०. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है	२००७
२१. वैदिक समाज विज्ञान	२००८
२२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद	२००९
२३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद	२०१०
२४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद	२०११
२५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्य: वैदिक परिप्रेक्ष्य	२०१२
२६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास	२०१३
२७. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०१४
२८. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	२०१५
२९. दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता	२०१६
३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त	२०१७
३१. षड्दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द	२०१८
३२. महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेद	२०२१
३३. उपनिषद् वाङ्मय में ईश्वर चिन्तन	२०२२

वैदिक स्वर संधान कार्यशाला

१४-२० अगस्त २०२३ स्थान - ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

वैदिक धर्मी के लिए वेद पाठ व स्वाध्याय नित्य प्रति का कार्य है। वेद का पाठ व स्वाध्याय हमें सीधे ईश्वर से जोड़ता है। वेद पाठ व स्वाध्याय करते समय वेदमन्त्रों पर लगीं अनेक खड़ी-पड़ी रेखाएँ व चिह्न भी दिखाई देते हैं। ये स्वर चिह्न होते हैं, जिनके अनुसार वेद मन्त्रों के उच्चारण व अर्थ में भेद होता है। जिन्हें संस्कृत - व्याकरण पढ़ने से इन स्वर चिह्नों का कुछ ज्ञान होता है, वे भी प्राय: उन्हें मन्त्रों पर ठीक से समझ नहीं पाते हैं। इन सब के ज्ञान व समझ को वेद प्रेमियों में पहुँचाने के लिए यह कार्यशाला आयोजित की गई है। वेद को अधिक अच्छे से समझना व उससे अधिक परिचित होना सुखद शान्ति देने वाला है। वेद से ठीक परिचित होकर हम उसकी रक्षा भी अधिक अच्छे से कर सकते हैं। वेद से अधिक लाभान्वित हो सकते हैं।

स्नातकोत्तर परीक्षाओं में वेद - विषय के पाठ्यक्रम में वैदिक स्वर विधि, संहिता - पाठ से पदपाठ या पदपाठ से संहिता - पाठ में मन्त्र का स्वर सहित परिवर्तन करना विद्यार्थियों को बड़ा कठिन प्रतीत होता है। स्वतन्त्र रूप से वेद का स्वाध्याय करने वाले लोग भी इस विषय में कठिनाई का अनुभव करते हैं। इसी कठिनाई के निदान हेतु यह कार्यशाला आयोजित की जा रही है। जिसमें सरलतम विधि से पाणिनीय अष्टाध्यायी तथा प्रातिशाख्य ग्रन्थों के आधार पर वैदिक स्वर विधि का प्रयोगात्मक प्रशिक्षण प्रदान किया जाएगा। यह कार्यशाला अपने ढंग की अनूठी कार्यशाला होगी और इस विषय में रुचि रखने वाले प्रतिभागियों के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगी।

ऐसी कार्यशाला गत वर्ष भी ऋषि उद्यान में हुई थी, जो कि बहुत सफल रही। यह कार्यशाला महर्षि दयानन्द सरस्वती चेयर (यूजीसी) के चेयर प्रोफेसर डॉ. नरेश कुमार धीमान के निर्देशन व प्रशिक्षण में होगी। जो वैदिक स्वरविधि पर अनेक वर्षों से निष्ठापूर्वक कार्य कर रहे हैं। इसमें आचार्य रवीन्द्र आदि अन्य विद्वानों का लाभ भी प्राप्त होगा।

यह कार्यशाला महर्षि दयानन्द सरस्वती चेयर (यूजीसी), महर्षि दयानन्द सरस्वती शोधपीठ, महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर तथा परोपकारिणी सभा, अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित की जा रही है।

कार्यशाला में प्रशिक्षण - भोजन - निवास नि:शुल्क है।

अपेक्षित योग्यता - वैदिक प्रशिक्षण के इच्छुक महानुभावों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे संस्कृत के सन्धि, सन्धिच्छेद तथा समास के सामान्य नियमों से अच्छी तरह अवगत हों।

प्रत्येक प्रतिभागी को नियमित रूप से स्वर - विषयक अभ्यास के लिए अभ्यास पुस्तिका (कॉपी), पैन, लाल और काली पेंसिल, शार्पनर तथा रबर शोधपीठ की ओर से पंजीकरण के साथ ही प्रदान की जाएंगी। सभी प्रतिभागी प्रतिदिन अभ्यास के लिए इन्हें अपने साथ कार्यशाला में अवश्य लेकर आएंगे।

आवास व्यवस्था के लिए सम्पर्क करें -

श्री नन्दकिशोर जी - ऋषि उद्यान, अजमेर - चल दूरभाष : 9314394421

भाग लेने के लिए इस लिंक पर आवेदन करें

https://forms.gle/qb2g1VgtQezdQdvs6

निवेदक

प्रो. नरेश कुमार धीमान

चेयर प्रोफेसर-महर्षि दयानन्द सरस्वती चेयर-यूजीसी महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर।

चल दूरभाष : 9780518504

मुनि सत्यजित् आर्य, मन्त्री, परोपकारिणी सभा एवं ऋषि उद्यान, अजमेर।

चल दूरभाष : 9116356061

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित
समान नागरिक संहिता
विद्वत् संगोष्ठी
दिनांक ०९ जुलाई २०२३
स्थान - सरस्वती भवन, ऋषि उद्यान, अजमेर

परोपकारिणी सभा के कार्यकारिणी अधिवेशन में संयुक्त मन्त्री श्री जयसिंह गहलोत के प्रस्ताव को स्वीकृत करते हुए यह निर्णय किया गया था कि प्रासंगिक व अत्यावश्यक विषय समान नागरिक संहिता पर विधि आयोग द्वारा जनता व संस्थाओं से माँगे गये प्रस्ताव - सुझाव के सन्दर्भ में परोपकारिणी सभा द्वारा भी वैदिक धर्म - महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज की ओर से विशेष मन्तव्य जाना चाहिए, इसके लिए शीघ्र ही एक विद्वत् संगोष्ठी आयोजित की जानी चाहिए।

अल्पकालीन पूर्व सूचना पर आयोजित इस संगोष्ठी में साक्षात् या गूगल मीट पर आर्यजगत् के कुछ सम्बन्धित विशिष्ट विद्वानों ने भाग लिया। अपने - अपने पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों के कारण अनेक विशिष्ट आमन्त्रित विद्वान् भाग न ले सके। उपस्थिति विद्वानों में डॉ. सुरेन्द्र कुमार- संरक्षक परोपकारिणी सभा, डॉ. वेदपाल - संरक्षक परोपकारिणी सभा, श्री सज्जनसिंह कोठारी, उपप्रधान परोपकारिणी सभा, आचार्य रवीन्द्र हमीरपुर, प्रो. शत्रुञ्जय रावत IIIT हैदराबाद, स्वामी ब्रह्मविदानन्द जी, आचार्य दर्शन योग महाविद्यालय, रोजड़, मुनि सत्यजित् - मन्त्री परोपकारिणी सभा, आचार्य भद्रकाम वर्णी, दिल्ली, परोपकारिणी सभा के मान्य सदस्य श्री कन्हैयालाल - उपप्रधान, श्री ओम्मुनि - पूर्व मन्त्री, श्री जयसिंह गहलोत - संयुक्त मन्त्री, श्री सुभाष नवाल - कोषाध्यक्ष, श्री सत्यानन्द आर्य - प्रधान परोपकारिणी सभा, श्री रामस्वरूप रक्षक, निर्वाण न्यास, अजमेर, आचार्य कर्मवीर ऋषि उद्यान, प्रो. डॉ. नरेश धीमान, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, अजमेर, श्री नवीन मिश्रा, मुनि ऋतमा, वानप्रस्थ साधक आश्रम, रोजड़ और अन्य अनेक आर्यसमाजों के अधिकारी व आर्यजन उपस्थित रहे व सक्रिय योगदान दिया।

विस्तृत चर्चा के बाद जो निर्णय हुए उन्हें विधि आयोग को भेज दिया गया। विधि आयोग को भेजा पत्र यथावत् यहाँ दिया जा रहा है -

प्रति

सचिव,

विधि आयोग, दिल्ली

विषय – समान नागरिक संहिता पर सम्मति एवं प्रस्ताव

महोदय,

सादर नमस्ते। विधि आयोग द्वारा भारत के नागरिकों एवं संस्थाओं से समान नागरिक संहिता के विषय में सम्मति व प्रस्ताव मांगे गए हैं। इस क्रम में महर्षि दयानंद सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा द्वारा 9 जुलाई 2023 को ऋषि उद्यान अजमेर में एक विद्वत् व सार्वजनिक संगोष्ठी की गई। व्यापक विचार–विमर्श के बाद जो निर्णय हुए वे परोपकारिणी सभा द्वारा आपको अवगत कराये जा रहे हैं–

1. भारत में समान नागरिक संहिता होनी चाहिए। यदि सरकार किन्हीं जनजातियों को समान नागरिक संहिता से छूट देना चाहती हो तो उन जनजातियों व उनके व्यक्ति के लिए समान नागरिक संहिता से तब तक ही छूट हो जब तक कि वे अपने मूल जनजातीय स्वरूप को ही अपनाये हुए हों, जब तक किसी अन्य

धर्म–सम्प्रदाय को मानने वाले न बनें।

2. युवक–युवति के विवाह की न्यूनतम आयु के विषय में जो कानून अभी अधिकांश समुदायों पर लागू है (18 वर्ष युवति और 21 वर्ष पुरुष) वह सभी भारतीय नागरिकों के लिए समान रूप से लागू किया जाय और यदि सरकार युवतियों के न्यूनतम आयु वृद्धि का नियम बनाती है तो परोपकारिणी सभा यह प्रस्तावित करती है कि वह भी सभी नागरिकों पर समान रूप से लागू हो, तब पुरुषों के विवाह की न्यूनतम आयु भी उतने वर्ष बढ़ाई जाये।

3. अधिकतम दो संतान ही करने का अधिकार हो, जो अधिक करें तो उसे सरकारी सुविधा रियायतों मताधिकार आदि से वंचित कर दिया जाए और प्रभावी दण्ड विधान भी हो। पुनर्विवाह की स्थिति में पूर्वविवाह से उत्पन्न संतानों (जो कि स्त्री या पुरुष के साथ हैं) सहित दो सन्तानों का ही नियम हो।

4. एक ही विवाह करने का अधिकार हो, अर्थात् एक समय में एक से अधिक पत्नी/पति न हों। जो निःसंतान दम्पती हैं वे संतान के लिए अन्य उपायों जैसे आईवीएफ आदि द्वारा अथवा गोद लेकर संतान प्राप्त कर लेवें।

5. विवाह के लिए युवक–युवती के चयन में चिकित्सकीय और सम्बन्धों की मर्यादा की दृष्टि से माता व पिता का कम से कम एक गोत्र छोड़ दिए जाने की व्यवस्था हो। और अतिनिकट के अन्य सम्बन्धों में जैसे– मौसेरे भाई–बहन, फुफेरे भाई–बहन, माता के अन्य विवाह से उत्पन्न सन्तान आदि से भी विवाह निषिद्ध होना चाहिए।

6. पति–पत्नी को संपत्ति के विषय में अधिकार के लिए सरकार जो नियम बनाये, वह सभी के लिए समान होना चाहिए।

7. सभी धर्म स्थानों को अपना प्रबंधन करने की समान स्वतंत्रता हो अथवा यदि सरकार उनका प्रबंधन या नियमन करती है तो वह भी सब धर्मस्थानों के लिए समान रूप से लागू हो।

8. तलाक (विवाह विच्छेद) संबंधी नियम–प्रक्रिया, भरण–पोषण के नियम आदि सबके लिए समान होने चाहिएं।

9. गोद लेने का अधिकार व प्रक्रिया (निःसंतानों के लिए) सब के लिए समान होनी चाहिए।

10. विवाहित स्त्री–पुरुष का विवाहेतर सम्बन्ध सब के लिए वर्जित हो। विवाहेतर सम्बन्ध बनाने वाले समान रूप से दंडनीय हों।

11. समलैंगिक शारीरिक सम्बन्ध, लिव इन रिलेशनशिप को कानूनी तौर पर सबके लिए वर्जित किया जाय।

12. सभी व्यक्तिगत व संस्थागत (गैर सरकारी) शिक्षण संस्थाओं में सरकार की ओर से समान नियम व्यवस्था, आर्थिक अनुदान होना चाहिए।

13. अल्पसंख्यक की परिभाषा एवं मापदंड होना चाहिए। यह सब पर समान रूप से लागू होना चाहिए। अल्पसंख्यक का निर्धारण प्रांत स्तर पर होना चाहिए।

परोपकारिणी सभा द्वारा यह सम्मति निरपेक्ष रूप से न्याय, भेदभाव रहित व्यवहार को ध्यान में रखते हुए भारत के प्रत्येक नागरिक के हित की भावना से व भारत राष्ट्र को उन्नत करने के उपाय की दृष्टि विधि आयोग को दी गई है। परोपकारिणी सभा यह आशा रखती है कि समान नागरिक संहिता भी उन्हीं उच्च न्यायपूर्ण मानवीय मूल्यों के आधार पर निर्मित की जायेगी।

विधि आयोग से निवेदन है कि आयोग अपना प्रारूप/ड्राफ्ट/ब्ल्यू प्रिन्ट यथाशीघ्र भेजे ताकि उसमें उल्लिखित बिन्दुओं पर विचार–विमर्श के उपरान्त कारण सहित विस्तृत राय प्रेषित की जा सके। धन्यवाद

समान नागरिक संहिता पर विमर्श करते विद्वज्जन।

आर जे/ए जे/80/2021-2023 तक प्रेषण : ३०-३१ जुलाई २०२३ आर.एन.आई. ३९५९/५९

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा आयोजित

भव्य ऋषि मेला

१७, १८, १९ नवम्बर २०२३

सादर आमन्त्रण

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज,

अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,